डा. चिंतामणि सिंह : जीवन कथा
तथा उनकी
पशु–चिकित्सा विज्ञान को देन

डा. रमेश सोमवंशी

मुद्रक : **बाइट्स एंड बाइट्स,**
95–बी, नेहरू पार्क, बरेली
फोन : 547608

डा. चिंतामणि सिंह : जीवन कथा
तथा उनकी
पशु–चिकित्सा विज्ञान को देन

डा. रमेश सोमवंशी

डा. चिंता मणि सिंह

दो शब्द

डा. सी. एम. सिंह, इंडोवमेंट ट्रस्ट, बरेली को *"डा. सी. एम. सिंह की जीवन–कथा उनकी पशु–चिकित्सा विज्ञान को देन"* शीर्षक की पुस्तक प्रकाशित करते हुये अत्यधिक गौरव का अनुभव हो रहा है। यह पुस्तक जाने–माने पशु–चिकित्साविद्, अनुभवी एवं विख्यात हिन्दी विज्ञान लेखक डा. रमेश सोमवंशी ने कई वर्षो तक डा. सिंह के जीवन एवं कृतित्व पर अनुसंधान करने के पश्चात् लिखी है। पुस्तक में दी गयी जानकारी प्रमाणित एवं वास्तविक तथ्यों पर आधारित है। इस बात में कोई संदेह नहीं है कि डा. सिंह के विशाल व्यक्तित्व एवं कृतित्व की तुलना में यह पुस्तक अत्यन्त लघु है तथा उन पर कई विशाल ग्रंथ लिखे जा सकते हैं। पुस्तक लेखक तथा मेरा निजी मत है कि डा. सी. एम. सिंह का जीवन एवं उपलब्धियां भारतीय पशु–चिकित्साविदों के लिए एक आदर्श हैं तथा यह अनेक लोगों के लिए प्रेरणा का स्रोत हो सकती हैं। डा. सिंह का जीवन एवं उपलब्धियां भारतीय पशु–चिकित्सा विज्ञान के इतिहास में स्वर्णिम अक्षरों में लिखा जायेगा। ट्रस्ट भविष्य में डा. सिंह की जीवन–गाथा अंग्रेजी तथा अन्य भारतीय भाषाओं में भी प्रकाशित करने का प्रयास करेगा। ट्रस्ट इस पुस्तक के लेखक डा. रमेश सोमवंशी को इस उत्तम कार्य के लिये बधाई देता है।

दिनांक 7–10–2000

विजयदशमी

कर्मचारी नगर, बरेली

(डा. श्यामल कुमार चट्टोपाध्याय)

अध्यक्ष

विषय वस्तु

लेखकीय

अध्याय–एक

बेलांव का बबुआ: चिंतामणि 1

अध्याय–दो

प्रारंभिक सेवाकाल एवं अमेरिका में अध्ययन 9

अध्याय–तीन

प्रोफेसर सिंह की शोध उपलब्धियां 17

अध्याय–चार

हिसार में अधिष्ठाता 28

अध्याय–पांच

भारतीय पशु–चिकित्सा अनुसंधान संस्थान,
इज्जतनगर के निदेशक 31

अध्याय–छ:

प्रिय विषय : पशु –चिकित्सा जन स्वास्थ्य 43

अध्याय–सात

डा. चिंतामणि सिंह –व्यक्तित्व एवं चरित्र 48

अध्याय–आठ

सेवानिवृत्ति पश्चात् योगदान 64

अध्याय–नौ

प्रमुख व्याख्यान एवं दीक्षांत भाषण 70

अध्याय–दस

मान–सम्मान एवं प्रशस्ति पत्र 89

अध्याय–ग्यारह

प्रकाशन 99

लेखकीय

'डा. चिंतामणि सिंह की जीवन कथा तथा उनकी, पशु–चिकित्सा विज्ञान को देन' लिखने के पीछे मुख्यतः निम्न उद्देश्य रहे हैं : प्रथम उनका आदर्श जीवन जो छात्रों विशेषतया पशु–चिकित्सा विज्ञान के स्नातकों, युवा पशु–चिकित्सकों,वैज्ञानिकों, अध्यापकों तथा व्यवसाय से सम्बन्धित अन्य लोगों के लिये प्रेरणा का स्रोत बने तथा द्वितीय डा. सिंह ने सर्वोच्च पद पर पहुँचने के पश्चात् अपना जीवन–वृत्त या 'बायोडाटा' बनाने का प्रयास नहीं किया। उनके सम्बन्ध में सामग्री यत्र–तत्र बिखरी हैं। डा. सिंह के पास भी स्वयम् से संबंधित सूचनाओं का अपार भंडार है किन्तु वे 'अप्राप्य' हैं। कुछ उनके मथुरा आवास में रखी हुयी हैं तथा कुछ दिल्ली में। डा. सिंह के व्यस्त जीवन / कार्यक्रम में इनकी सुलभता तथा अवलोकन कठिन है, यद्यपि उनकी हार्दिक इच्छा है कि यह सर्वसुलभ हों। ऐसी स्थिति में उपर्युक्त उद्देश्य प्राप्त करने हेतु निम्न विधियां अपनायी गयीं। (1) सन् 1997–99 में डा. सिंह से दिल्ली स्थित उनके आवास में बार–बार मिलकर उनकी जीवन कथा संबंधी अविस्मरणीय प्रसंग सुनकर आलेख तैयार करना। (2) पशु–चिकित्सा महाविद्यालय, मथुरा के जीवाणु तथा विकृति विज्ञान विभाग से उनके कार्यकाल के प्रकाशनों तथा उनके पूर्व छात्रों से सामग्री संग्रह। (3) भा.प.चि.अ.सं., इज्जतनगर के उनके निदेशक काल के वार्षिक प्रतिवेदन तथा अन्य संबंधित प्रकाशनों का अध्ययन और सामग्री संग्रह । (4) डा. सिंह के निकट के लोगों, तत्कालीन निजी स्टाफ, उनके पूर्व छात्र तथा निकटतम वैज्ञानिकों से बातचीत / सूचना संग्रह। (5) उनके परिवारजनों से साक्षात्कार। अंतिम विधि कम सफल रही क्योंकि उनके पुत्र/पुत्रियां विदेशों में हैं किन्तु जो भी मिला उसने पूर्ण सहयोग किया।

प्रश्न उठता है कि डा. सिंह की जीवन गाथा लिखने की बात मन में कैसे आयी? यह भी एक संयोग का विषय है। डा. सिंह के एक भूतपूर्व व्यक्तिगत सहायक श्री गंगाराम कटारिया ने एक दिन अपने निवास में व्यक्तिगत मुलाकात के समय संस्थान को उलाहना देते हुये कहा कि डा. सिंह 30 नवम्बर, 1997 को अपने जीवन के 75 वर्ष पूर्ण करेंगे। क्या इस अवसर पर संस्थान को उन्हें सम्मानित नहीं करना चाहिये तथा इस दिन को समारोह पूर्ण नहीं मनाना चाहिये। उसी दिन से मैंने निजी स्तर पर डा. सिंह के 75वें या अमृत/प्लेटिनम जुबली जन्म दिवस समारोह मनाने हेतु एक अभियान चलाया तथा डा. सिंह पर एक लेख लिखा जो कि फैजाबाद से प्रकाशित होने वाली एक साहित्यिक पत्रिका **'अवध अर्चना'** के जनवरी–मार्च 1997 के अंक में छपा। इस लेख का शीर्षक था *'पशु–चिकित्सा विज्ञान के आधुनिक शिल्पी: डा. चिंतामणि सिंह।*

इसी क्रम के अन्तर्गत लखनऊ से प्रकाशित होने वाली एक पशु विज्ञान की हिन्दी पत्रिका में उन पर विशेषांक निकालने के लिये मुख्य सम्पादक को प्रेरित किया तथा वह सहमत हो गये। विधाता को यह स्वीकार नहीं था। सम्पादक जी किसी विशिष्ट कार्य पर प्रस्थान कर गये तथा उक्त पत्रिका की अकाल मृत्यु हो गयी। खैर,मजबूरन मैंने 'वेट् और पेट्' नामक हिन्दी त्रैमासिक पत्रिका का सम्पादन प्रारंभ किया तथा मेरी पत्नी ने इसके प्रकाशन का उत्तरदायित्व ग्रहण किया। चंद माह तक डा. सिंह पर सामग्री संग्रह किया तथा 'वेट् और पेट्' के नवम्बर, 1997 अंक में डा. सिंह पर विशेषांक निकाला। इसका सुधी पाठकों ने स्वागत किया। कुछ वरिष्ठ पशु–चिकित्साविदों से इस कार्य में सहयोग की आशा थी किंतु उनके ऋणात्मक उत्तर अथवा गोलमाल जबाब से कुछ हतोत्साहित भी हुआ। इसे प्रकाशित करने से पूर्व डा. सिंह को कई पत्र लिखे तथा उनसे सहमति प्राप्त करने का प्रयास किया। मुझे ऐसा लगा कि डा. सिंह का आशीर्वाद तथा मौन स्वीकृति मेरे साथ है।

डा. सिंह से दिल्ली में कई मुलाकातों में उन पर कुछ लेख लिखने हेतु उनकी जीवन कथा सुनने की इच्छा प्रकट की। लगभग 5–6 साक्षात्कार/बातचीत के द्वारा जो सूचनायें मिली उनसे ऐसा लगा कि उनकी जीवन कथा लेखनीबद्ध होनी चाहिये। मेरा साहित्यकार मन सक्रिय हो गया एवं इस दिशा में कार्य प्रारंभ कर दिया। मुझे ऐसा लगा कि जैसे विधाता ने गोस्वामी तुलसीदास को राम कथा लिखने का सुअवसर दिया था, वैसे ही मुझे डा. सिंह की कथा लिखने का मौका मिला है। कच्छप गति से यह कार्य प्रारंभ हो गया। हालांकि कार्य सरल न था और राह में अनेक बाधायें थीं और प्रमुख समस्या थी, मेरे अत्यधिक सक्रिय शोध जीवन के मध्य से ऐसे गंभीर कार्यों हेतु समय निकालना'। कहते हैं जहां चाह है वहां राह है। छुट्टियों तथा किसी भी खाली समय में इस कार्य को धीरे–धीरे लेखनीबद्ध करता रहा।

इस कार्य में डा. सिंह से सदैव पूर्ण सहयोग मिला। दिल्ली पहुँचने पर फोन पर समय मांगने पर उन्होंने सदैव कृपा कर समय दिया तथा अपने साथ रुकने का आमंत्रण दिया। हमेशा घर पर पहुँचने पर डा. साहब एवं 'काकी' (श्रीमती सिंह) अपने बच्चे जैसा स्वागत करते थे तथा कुशल–क्षेम पूछ कर, फ्रेश होने को. कहते थे। फिर डा. सिंह से उनके जीवन प्रसंग पर चर्चा होती थी। काकी बीच–बीच में किचन या अन्य कार्यों से फुर्सत होने पर बातचीत में शामिल होती थीं व अतिरिक्त सूचनायें प्रदान करती थीं अथवा घटनाओं के विषय में अपना पक्ष प्रस्तुत करती थीं। बातचीत के कारण बिलम्ब होने पर रात्रि भोजन करने पर जोर देती थीं। बातचीत करने में डा. सिंह थकते नहीं थे तथा मुझे ही प्रायः वार्ता अगली प्रातःकाल तक के लिये भंग करनी पड़ती थी।

उनकी जीवन कथा का सार इस प्रकार है–ग्रामीण परिवेश में जन्मे एक मेधावी बालक को उसके पिता वकील बनाना चाहते थे किंतु भाग्य एवं एक अध्यापक की सलाह से वह पशु–चिकित्सक बन गया। पशुओं की दशा अथवा दुर्दशा तथा उनमें रोग प्रकोप से मृत्यु ने उनके दृढ़ संकल्प के फलस्वरुप उच्च अध्ययन हेतु अमेरिका पहुँचा दिया। भारत वापस आकर मथुरा में 'शोध–यज्ञ' द्वारा प्रो. चिंतामणि सिंह ने अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति की सिद्धियां प्राप्त कीं और शीघ्र ही वे राष्ट्रीय पशु–चिकित्सा अनुसंधान संस्थान के निदेशक तथा भारत के पशु–चिकित्साविद् न. 1 बन बैठे। कालान्तर में उनके कार्य एवं उपलब्धियाँ अश्वमेघ यज्ञ के किसी अजेय घोड़े जैसे सिद्ध हुए जिसके द्वारा देश को पशु–चिकित्सा विश्वविद्यालय, भारतीय पशु–चिकित्सा विज्ञान परिषद तथा राष्ट्रीय पशु–चिकित्सा विज्ञान अकादमी ज़ैसे अनमोल रत्न तुल्य संस्थायें प्राप्त हुई। इस प्रकार से उन्होंने पशु–चिकित्सा के साम्राज्य को सुदृढ़ किया। पशु–चिकित्सक के रुप में जीवन प्रारंभ करने वाले जीवाणु तथा विकृति विज्ञान की विशेषज्ञता रखने वाला व्यक्ति, प्राध्यापक, प्रशासक (डीन/निदेशक) तथा सक्रिय राजकीय सेवानिवृति के पश्चात् पशु चिकित्सा विज्ञान शिक्षा–शास्त्री बना। डा. सिंह के योगदान से ऋणी व्यवसाय ने उन्हें अनेक मान–सम्मान, प्रशस्ति–पत्र प्रदत्त करे, देश के चार विश्वविद्यालयों ने उन्हें डी. एस–सी, की मानद उपाधि से सम्मानित किया। उनकी जीवन कथा ईमानदारी, सादगी, संघर्षों भरी तथा निरंतर कोई उद्देश्य प्राप्ति हेतु प्रेरित रही है। गंभीरता से इसका अध्ययन, मनन एवं उसी दिशा में क्रियान्वयन करने पर पाठक अपने जीवन में कुछ न कुछ अवश्य हासिल कर सक़ते हैं।

दिनाँक: 7–10–2000

(डा. रमेश सोमवंशी)
इज्जतनगर

कृतज्ञता ज्ञापन

पुस्तक लेखन में मैं श्रीमती एवं डा. सी.एम.सिंह का अत्यन्त आभारी हूँ जिनके सम्पूर्ण सहयोग, हर संभव सहायता तथा पुस्तक लेखन की अनुमति के बिना इस पुस्तक–लेखन की कल्पना भी नहीं की जा सकती थी। मैं निदेशक, भारतीय पशु चिकित्सा अनुसंधान संस्थान, इज्जतनगर का विविध सामग्री एवं चित्रों के उपयोग की अनुमति प्रदान करने हेतु आभारी हूँ। लेखक डा. सिंह के संबंध में मथुरा कार्यकाल की सामग्री प्रेषण के लिये डा. ए.के. श्रीवास्तव, आचार्य, विकृति विज्ञान विभाग, पशुपालन एवं चिकित्सा विज्ञान महाविद्यालय, मथुरा का आभारी है। मैं चित्रों हेतु छायाकार श्री मधुप, श्री कुंदन सिंह, प्रभारी संचार केन्द्र, श्री नवल किशोर सिंह, उद्यान विभाग, श्री अनिरूद्ध प्रसाद; विकृति विज्ञान विभाग, श्री राजीव कुमार, पाण्डुलिपि टंकण हेतु, श्री गणेश कुमार एवं कुमारी भावना शर्मा का पाण्डुलिपि में संशोधन एवं प्रूफ रीडिंग हेतु विशेष रूप से कृतज्ञ हूँ।

लेखक डा. सी. एम. सिंह, इंडोवमेंट ट्रस्ट, बरेली का पुस्तक प्रकाशन हेतु आभारी हूँ।

अंततः बिना पारिवारिक सहयोग के मेरा कोई कार्य पूर्ण नहीं होता है। पुस्तक लेखन में निरंतर प्रोत्साहन हेतु मैं अपनी पत्नी श्रीमती मंजु सोमवंशी तथा पुत्र ऋषि कुमार सोमवंशी का आभारी हूँ।

अध्याय – एक

बेलांव का बबुआः चिंतामणि

पूर्वांचल उत्तर प्रदेश के केराकत, जौनपुर जिले में चित्तौड़गढ़, राजस्थान के शूरवीर महाराणा प्रताप के पूर्वजों के समय के पलायित कुछ राजपूत बसे हुये हैं, जो कि दुर्गवंशी कहलाते हैं। इनके 60 से अधिक गांव हैं। इन्हीं गांवो में बेलांव नामक गांव में ठाकुर वंशीधर सिंह को नवासा मिला था। उनकी धर्मपत्नी थी यशोधरा। इन्हीं ठाकुर साहब के परिवार में एक बालक का चैत रामनवमी के आस–पास जन्म हुआ था, जिसका नाम चिंतामणि रखा गया। चिंतामणि कुल छह भाई–बहन थे। बालक चिंतामणि जब कुछ बड़ा हुआ तो अपने भइया के साथ गांव के स्कूल में जाने लगा। स्कूल के मुंशी को बिना प्रवेश के चिंतामणि के रोज–रोज स्कूल आने पर जब कुछ कठिनाई हुयी तो उन्होंने यह बात उसके पिता तक पहुंचायी। पिता ने मल्लाह मुंशी से कहा–उसका नाम हाजिरी रजिस्टर में लिख लें। मुंशी जी बोले चिंतामणि की उम्र पांच साल से कम है। बालक के पिता बोले–तो क्या हुआ, आयु बढ़ाकर लिख दें। मुंशीजी ने 30 नवम्बर, 1922 की जन्मतिथि लिख दी । उस काल में बेलांव गांव में गिनी–चुनी लालटेनें थीं, सब दिये या ढिबरी की रोशनी में कामकाज करते व पढ़ते थे। लालटेन का उपयोग 'ठाठ' माना जाता था। चिंतामणि से जब किसी अध्यापक ने उसके नाम का अर्थ पूछा तो वह नहीं बता पाया। अध्यापक ने बताया–चिंतामणि का अर्थ है– चिंता हटाने वाला अर्थात् ईश्वर। चिंतामणि ने मिडिल परीक्षा पास किया। वह पढ़ाई में अच्छा था तथा उसने कभी भी मास्टर साहब का डंडा नहीं खाया था।

अभिमन्यु का अभिनय:– जब चिंतामणि मिडिल स्कूल के छात्र थे तब उन्होंने एक नाटक में अभिमन्यु का रोल अदा किया था। राजा साहब सिंगरामऊ की ओर से उसे साफा, शेरवानी आदि वेश–भूषा प्रदान की गयी थी। सात महारथियों से घिरे, घायल बालक अभिमन्यु ने गिरते समय अपने माता–पिता को याद करते हुये जो पक्तियां कहीं थीं, उसे डा. सी. एम. सिंह ने रोमांचित होते हुये सुनाया–

हे तात, हे मातुल, जहां हो, है तुम्हें प्रणाम वहीं।
अभिमन्यु का, इस भाँति मरना, भूल मत जाना कहीं।।

चिंतामणि का स्वभाव अन्य भाइयों से भिन्न था। यदि वे किसी बात को अपने पिता या अन्य से कह देते थे तो उसका पालन करते थे। एक दिन सभी भाई समय गुजारने के लिए ताश खेल रहे थे। किसी ने इस बात की सूचना उनके पिता को दी। पिता के आने की आहट से अन्य भाई तो भाग गये और वहां केवल चिंतामणि रह गये। पिता के उलाहना देने पर उन्होंने कहा–क्षमा करें, मैं भाविष्य में कभी ताश को हाथ नहीं लगाऊँगा। उन्होंने अपने वचन का पालन जीवन–पर्यन्त किया।

घर के बड़े–बूढ़ों का बच्चों को आदेश था, वे गांव के सामान्य बच्चों की तरह ऊधम न काटें। या तो वे खेत या बाग जायें अथवा घर के दरवाजे पर बैठकर पढ़ाई करें। चिंतामणि ऐसा ही करते थे।

वह अपने गांव का पहला किशोर था, जो पढ़ाई करने कालेज गया था। इससे गांव के पट्टीदारों को बहुत ईर्ष्या हुयी। अध्ययन का सिलसिला जारी रहा तथा उसने बनारस के प्रसिद्ध उदय प्रताप कालेज में इन्टर–विज्ञान में प्रवेश लिया।

उदय प्रताप कालेज का प्रभाव

चिंतामणि के जीवन पर वहाँ की शिक्षा एवं नैतिक अध्यापन का गहरा प्रभाव पड़ा। उदय प्रताप कालेज का नियम था कि वहाँ केवल क्षत्रियों को प्रवेश मिलेगा तथा वहाँ का प्रधानाचार्य शासक वर्ग (अंग्रेज / क्षत्रिय) का होगा। कालेज में घुड़सवारी, खेलकूद तथा नैतिक शिक्षा पर भी ध्यान दिया जाता था। प्रत्येक छात्र को जीवन–पर्यन्त 'गीता' रखने का निर्देश था। छात्रों की वेष–भूषा थी – खाकी नेकर, सफेद शर्ट तथा पगड़ी। विशेष कार्यक्रमों में कालेज के सभी छात्र कवायद या परेड करते थे। इस विद्यालय में कठोर अनुशासन था एवं यहाँ के अनेक छात्र भारतीय प्रशासनिक सेवा, सेना, भारतीय पुलिस तथा अन्य संस्थानों में उच्च पदाधिकारी ही नहीं नियुक्त हुये, अपितु राष्ट्रीय स्तर पर शीर्षस्थ पदों पर पहुंचे। चिंतामणि उनमें से एक थे।

सन् 1942 में जब देश में 'भारत छोड़ो आन्दोलन' जोरों पर था तो अंग्रेज प्रधानाचार्य एवं कठोर प्रशासन के बावजूद यहाँ के छात्र भी आजादी की लड़ाई में पीछे नहीं थे। चिंतामणि भी ऐसे छात्रों में सम्मलित रहता था। एक बार वहाँ के छात्र सामूहिक रुप में छात्र नेता हरंगी सिंह के नेतृत्व में बिजली के तार काट रहे थे। हरंगी सिंह खम्भे पर चढ़ा हुआ था तथा हथौड़ी से किरमिच का लट्टू तोड़ रहा था, तभी अंग्रेजों के नेतृत्व में घुड़सवार पुलिस दल आ गया। छात्र भाग खड़े हुये। चिंतामणि को उक्त स्थान से नदी पार कर, गाँवों वाले मार्ग से उदय प्रताप कालेज के रास्ते का ज्ञान था। वह गाँवों एवं जंगलों से होते हुये छात्रों के साथ वापस कालेज पहुँचा। छात्र पुलिस कार्यवाही की संभावना से भयभीत थे। हरंगी सिंह फरार हो गये। गनीमत रही कि चिंतामणि का नाम पुलिस को पता नहीं चला । इस घटना की सूचना पाकर चिंतामणि के चिंतित पिता बनारस आये तथा उसे घर ले गये। चिंतामणि इस घटना को रोमांचकतापूर्ण याद करते हैं। वे निडर स्वतंत्रता सेनानी, सच्चे देशभक्त तथा नेताजी सुभाष चन्द्र बोस के प्रबल समर्थक एवं प्रशंसक हैं।

पिता चाहते थे कि चिंतामणि गांव की अपनी जमीन के मुकदमे देखें तथा वकालत की पढ़ाई करें। युवा चिंतामणि ने पिता की इच्छा का पालन करने हेतु ऐसा करना प्रारंभ भी कर दिया। वह खाता–पीता, मौज–मस्ती करता तथा कचहरी जाता था। एक दिन वह अपने वकील के पास गद्दी पर

बैठा हुआ था। वकील ने अपने मेहनताने के सम्बंध में एक अत्यंत निर्धन ग्रामीण से चाँदी का एक मुट्ठी रुपया पाने पर उसके मुंह पर फेंक कर मार दिया। यद्यपि ग्रामीण ने वकील की चिरौरी भी की कि वह भैंस बेच चुका है, जमीन भी चली गयी है तथा भूसा आदि बेच कर फीस चुका देगा किंतु वकील ग्रामीण को अपमानित करता रहा। इससे चिंतामणि को वकालत के पेशे से नफरत पैदा हो गयी, तथा वह अपने पिता की वकील बनने की इच्छा का विरोधी हो गया। इसी बात को लेकर पिता से टकराव की स्थिति उत्पन्न हो गयी। अंततः वह अपने एक अध्यापक प्रो. लाल बहादुर सिंह के पास सलाह के लिये गये। प्रो. सिंह ने कहा– वह पशु–चिकित्सा की पढ़ाई करें। इसके लिये उत्तर प्रदेश सरकार प्रतिवर्ष 20 लोगों का चुनाव करती है तथा उन्हें वजीफा भी देती है। यह पढ़ाई लाहौर, कलकत्ता, मद्रास या पटना में की जा सकती है। चिंतामणि को एक दिशा मिल गयी।

पशु–चिकित्सा महाविद्यालय पटना में प्रवेश

चिंतामणि सिंह वेट्रनरी कालेज, पटना में अध्ययन करने लगे। उसे प्रत्येक वर्ष कक्षा में प्रथम स्थान व स्वर्ण पदक प्राप्त होता था। जब वह छुट्टियों में बेलांव आता था तो गांव वाले उसके पदक देखने के लिये एकत्रित होते थे।

एनॉटामी में विशेष योग्यता

जब चिंतामणि बिहार वेट्रनरी कालेज, पटना का छात्र था तो उसे यह जानकर आश्चर्य हुआ कि शरीर रचना विज्ञान या 'एनाटॉमी' विषय में छात्रों की कभी भी विशेष योग्यता या डिस्टिंक्शन नहीं आती है। उसने तुरन्त मन में ठान लिया कि वह ऐसा करने का यथासंभव प्रयास करेगा। उसने अपने एक सहपाठी, जो कि मेडिकल कालेज का छात्र था, मानव शरीर रचना विज्ञान की एटलस/नोट्स इत्यादि प्राप्त कर, उनका अध्ययन करना प्रारंभ किया। एनाटॉमी की थ्योरी तथा प्रैक्टिकल कक्षाओं में अधिक ध्यान देना शुरु किया। शीघ्र ही एनाटामी विषय के अध्यापक जान गये कि चिंतामणि अन्य छात्रों की तुलना में एनाटॉमी अधिक जानता है। कई बार तो ऐसा हुआ कि जब अध्यापक कहीं अटके तो उसने उन बिन्दुओं को स्पष्ट किया।

अंततः वार्षिक परीक्षा शुरु हुयी। परीक्षक महोदय आये। उन्होंने एनाटॉमी के अध्यापकों से चिंतामणि की चर्चा की तथा कहा कि वह सब से पहले उससे बात करेंगे। चिंतामणि की उत्तर पुस्तिका के सुंदर–सुस्पष्ट रेखाचित्रों से परीक्षक महोदय बहुत अधिक प्रभावित थे। उन्होंने उनसे प्रश्न पर प्रश्न किये तथा उत्तर पाकर अत्यंत संतुष्ट हुये। परीक्षक के पूछने पर चिंतामणि ने बताया कि एनाटॉमी की पढ़ाई में उसने 'ह्यूमन एनाटॉमी' की पुस्तकों से सहायता ली है। परीक्षक ने उन्हें एनाटॉमी विषय में विशेष योग्यता (डिस्टिंक्शन) दिया। जब चिंतामणि को यह सूचना मिली तो उसकी आँखों से आंसू टपक पड़े। यह सफलता की खुशी के आंसू थे। उन दिनों अच्छा 'पैथोलोजिस्ट' वह होता था, जो एनाटॉमी विषय का परम ज्ञाता होता था। शायद चिंतामणि के भविष्य में श्रेष्ठ पैथोलोजिस्ट होने के पीछे यही रहस्य था।

गांव के रोगियों की सेवा–उपचार

छात्र जीवन में चिंतामणि का कुछ मानव चिकित्सकों से सम्बंध था तथा उनसे चिकित्सा सम्बन्धी ज्ञान एवं पुस्तकें प्राप्त कीं। जब वे पशु–चिकित्सा महाविद्यालय, पटना के छात्र थे तथा छुट्टियों में गांव जाते थे तो रोगियों का उपचार और सेवा किया करते थे। ऐसे दो वृतांत उनकी स्मृति में संजोये हुये हैं। ये दोनों रोगी जटिल एवं गंभीर रुग्णावस्था से पीड़ित थे और वे चाहते थे कि चिंतामणि उन्हें देख लें। उन्हें पूर्ण विश्वास था कि चिंतामणि के ध्यान देते ही उनका रोग ठीक हो जायेगा।

उनमें एक थीं – सम्मानीय अधेड़ आयु की महिला–मिश्राइन। उनके पैर में जबर्दस्त फोड़ा हो गया था, जिससे उन्हें अत्यंत कष्ट था। पैर की पीड़ा से वह त्रस्त रहती थीं। वे अपना व्याधिग्रस्त पैर किसी को छूने नही देती थीं। चिंतामणि से उन्होने अनुरोध किया कि वह उनका इलाज करें। चिंतामणि ने उनका घाव देखा और भली–भाँति साफ किया। मिश्राइन को इससे बहुत आराम मिला तथा वे कष्ट निवारण के बाद खूब सोईं। धीरे–धीरे उनका पैर ठीक हो गया। उन्होंने चिंतामणि को ढ़ेरों आशीर्वाद दिये। चिंतामणि ऐसे आशीर्वाद को कल्याणकारी व प्रभावी मानते हैं।

दूसरा वृतांत एक मल्लाह का था। वह खूनी पेचिश से पीड़ित था। बीमारी काफी पुरानी थी और घर वालों ने उसके बचने की आशा छोड़ दी थी।

नदी के किनारे वह अपनी चारपाई पर पड़ा रहता था, जहां से वह मल–मूत्र त्यागता था वहां पर चारपाई की बान को काट दिया गया था। उसके मल–मूत्र पर रेत डाल दिया जाता था व पानी डाल कर बहा दिया जाता था। मल्लाह व उसके घर वालों ने चिंतामणि से बार–बार अनुरोध किया कि वह एक बार उसे देख जायें जबकि चिंतामणि के घर वाले इससे सहमत नहीं थे। अंततः चिंतामणि ने रोगी मल्लाह का निरीक्षण किया। वह घर वापस आया। उसके पास आयुर्वेद की एक पाण्डुलिपि थी, जिसमें मल्लाह के जैसे चिरकारी पेचिस का वर्णन एंव उपचार मिला। उन्होंने मल्लाह को दवा दी तथा बहुत अधिक मट्ठा सेवन करने को कहा। चूंकि मल्लाह के घर गाय–भैंस थीं, अतः इसमें कठिनाई नहीं थी। पन्द्रह दिन दवा लेने की सलाह के पश्चात् चिंतामणि पटना चले गये। उन्हें भी मल्लाह के ठीक होने में शंका थी। पांच– छह माह बाद जब चिंतामणि घर लौटे तो एक हष्ट–पुष्ट व्यक्ति उन्हें प्रणाम करने आया। घर वालों ने पूछा इसे पहचाने, चिंतामणि ने कहा – नहीं। उसे यह जानकर आश्चर्य हुआ कि यह वही मल्लाह है, जिसे वह पेचिस की दवा देकर पटना चले गये थे। मल्लाह ने उन्हें पैसा, भैंस आदि देना चाहा परन्तु उन्होंने व परिवार वालों ने ऐसा करने से इन्कार किया। उनके पास धन और पशुओं की कोई कमी नहीं थी। उपचार तो सेवा भावना से किया था। इसके पश्चात् चिंतामणि जब भी गांव आते थे, कृतज्ञ मल्लाह उन्हें 'जुहार' करने अवश्य आता था। चिंतामणि ने मल्लाह को दिये गये उपचार पर चिंतन किया तथा यह निष्कर्ष निकाला कि मल्लाह प्रोटीन न्यूनता तथा निर्जलीकरण से गंभीर रुप से पीड़ित था। मट्ठे के पर्याप्त सेवन से उसे लाभ हुआ तथा वह स्वस्थ हो गया।

नेताजी सुभाष का प्रशंसक

चिंतामणि नेताजी सुभाष चन्द्र बोस की बहुत प्रशंसा करते तथा उन्होंने सुभाष चन्द्र बोस के समर्थन में बैंड–बाजे युक्त जुलूस का आयोजन किया था। इस जुलूस की पटना वासियों ने बहुत प्रशंसा की। चिंतामणि ने सन् 1947 में ग्रेजुयट ऑफ बिहार वेट्रनरी कालेज (जी बी वी सी) की उपाधि पूर्ण की। उसे प्रथम आने पर कक्षा में स्वर्ण पदक प्राप्त हुआ।

आजमगढ के डाकघर मेहनाजपुर (अब तिलखरा) क्षेत्र में एक गांव है– डंगरहा। वहाँ ठाकुर रुपा सिंह रहते थे। वे शिक्षित थे तथा जलपाईगुड़ी, बंगाल में मुनीम का कार्य करते थे। उन्हें बंगला भाषा का भी ज्ञान था। ठाकुर साहब की पत्नी कुशाग्र बुद्वि वाली थीं। उनकी पत्नी यद्यपि पढ़ी–लिखी नहीं थीं किन्तु उन्हें पहाड़ा, पौव्वा, पवन्ना, सवइया इत्यादि का ज्ञान था। वह तत्कालीन माप प्रणाली तोला, माशा, रत्ती आदि की अच्छी जानकारी रखती थीं। गांव की स्त्रियां गहने खरीदते समय उनकी सहायता से हिसाब–किताब करती थीं। ठाकुर रुपा सिंह की दो पुत्रियां थीं–चन्द्रजोत तथा बंसरानी। बच्चियों को पढ़ाई में विशेष लगाव नहीं था तथा वे गांव की आम बलिकाओं की तरह खेल–कूद कर अपना बचपन गुजार रहीं थीं।

एक दिन चंद्रजोत खेत में थी। उसने गांव के स्कूल के बच्चों को कंधे पर बस्ता तथा हाथ में पट्टी (तख्ती) लिये आते देखा। उसके मन में आया–यही अच्छा है। मुझे पढ़ना चाहिए। वह भाग कर घर आयी और अपनी माता से बोली– "मां मैं पढ़ाई करुंगी"। मां ने कहा–"बिटिया मैं तो तुम्हें कब से कहती थी, कि तुम्हें पढ़ना चाहिए"। उसका नाम दूसरी कक्षा में लिखा गया क्योंकि स्कूल के मुंशी ने पाया कि वह कच्ची पहली और पक्की पहली कक्षा के स्तर से कहीं अच्छा ज्ञान रखती है। चंद्रजोत की एक विशेषता थी कि वह हमेशा अपनी से बड़ी कक्षा के बच्चों की किताब मांग कर पढ़ती थी। उसने कक्षा पांच की परीक्षा मेहनाजपुर हल्का में प्रथम स्थान से पूर्ण की तथा उसकी गणित में विशेष योग्यता थी।

चंद्रजोत की और आगे पढ़ने की इच्छा थी परन्तु ग्राम कुरहरा में स्थित अगला स्कूल लड़कों का था। घरवालों ने आगे पढ़ने की आज्ञा नहीं दी। चंद्र को बहुत दुख हुआ कि भगवान ने उसे लड़की क्यों बनाया। यदि वह लड़का होती तो आगे मिडिल की पढ़ाई कर सकती थी। उसने खाना–पीना छोड़ दिया तथा एक माह तक रुठी रही और दुबली हो गई। मजबूर होकर घरवालों ने उसे आगे प्राइवेट रुप से पढ़ाने की आज्ञा दी। इसमें उसकी गांव की एक प्रशिक्षित अध्यापिका ने सहायता की। स्कूल व किताबों के न होने के कारण चंद्रजोत को बहुत कठिनाई थी। उसने इधर–उधर से मांग कर किताबें

एकत्र की। कुछ पुस्तकें इलाहाबाद से वी.पी.पी. द्वारा भी मंगवायी। चंद्रजोत वर्नाकुलर (मिडिल/अपर) की परीक्षा देने इलाहाबाद आयी, साथ में उसके भइया थे। वह पहली बार बस में बैठी। वे किसी रिश्तेदार के घर रुके जो क्लर्क थे। वे आटा/सीधा आदि साथ लाये थे। भइया खाना बनाते थे। इस प्रकार चंद्रजोत ने द्वितीय श्रेणी में 'मिडिल' की परीक्षा उत्तीर्ण की। उसे बताया गया कि यदि वह अंग्रेजी की परीक्षा उत्तीर्ण कर लेती है तो वह हाईस्कूल पास मानी जायेगी।

पिता के निधन के कारण माता तथा परिवार वाले चंद्र के विवाह की जल्दी में थे। अंततः उस का विवाह बेलांव गांव, जिला जौनपुर के ठाकुर वंशीधर सिंह के द्वितीय पुत्र चिंतामणि सिंह के साथ तय हुआ। ठाकुर वंशीधर दहेज चाहते थे किंतु चंद्रजोत का परिवार ऐसी स्थिति में नहीं था। सन् 1946 में जब चिंतामणि अंतिम वर्ष (जी बी वी सी) पशु–चिकित्सा विद्यालय, पटना के छात्र थे तो पारम्परिक ढंग से विवाह सम्पन्न हुआ तथा चंद्रजोत की डोली बेलांव पहुँची।

विवाह के कुछ माह पश्चात चंद्रजोत अपने पशु चिकित्सक पति डा. चिंतामणि सिंह के साथ फूलपुर, इलाहाबाद आ गयीं। यहाँ पर उसने कुछ दिनों पश्चात् राजकीय नारमल महिला विद्यालय, इलाहाबाद में एच टी सी में प्रवेश लिया। वह छात्रावास में रहती थी। साथ ही हाईस्कूल परीक्षा देना चाहती थी परन्तु वह ऐसा नहीं कर सकी क्योंकि एच.टी सी की परीक्षा भी बोर्ड की थी तथा एक वर्ष में बोर्ड की दो परीक्षायें नहीं दी जा सकती थी। राजकीय नारमल महिला विद्यालय की प्रधानाचार्य मिस विमला तिवारी से चंद्र की अभिन्नता हो गयी तथा वे चंद्रजोत की प्रशंसक थीं।

अध्याय – दो

प्रारंभिक सेवाकाल एवं अमेरिका में अध्ययन

पशु–चिकित्सक

डा. चिंतामणि सिंह ने पशु–चिकित्सा विभाग में सहायक पशु–चिकित्सक पद पर फूलपुर, इलाहाबाद में योगदान दिया। कालांतर में वह पशुपालन विभाग में सर्किल इंसपैक्टर नियुक्त हुये। उसी काल में पूर्वोत्तर उत्तर प्रदेश के गोरखपुर व देवरिया जिले में भैंसों में किसी रोग का प्रकोप हुआ, जिससे अनेक भैंसों कालग्रस्त हो गयीं। उत्तर प्रदेश विधान सभा में इस समस्या पर प्रश्न उठा। तत्कालीन पशुपालन मंत्री श्री शेरवानी ने व्यक्तिगत हस्तक्षेप किया। प्रदेश सरकार ने तुरंत पशु रोग प्रकोप अन्वेषण तथा इसके रोकथाम का निर्देश दिया। डा. चिंतामणि सिंह को इस रोग के अन्वेषण का अवसर मिला। उन्होंने 'ट्रिपनोसोमता' का निदान किया हालांकि पशु–चिकित्सा विज्ञान की सरकारी 'लाल पुस्तक' में भैंस में यह रोग न होना लिखा था। जब डा. सिंह रोग प्रभावी क्षेत्रों में आये तो पाया कि पशुओं की मृत्यु एवं आर्थिक हानि से नाराज ग्रामीण, पशु–चिकित्सा दल के 12–13 सदस्यों से असहयोग कर रहे थे तथा उन्हें दूरस्थ ग्रामीण क्षेत्रों में भोजन–पानी की भी कठिनाई थी। डा. चिंतामणि ने एक रोगी पशु की जाँच व चिकित्सा की। ट्रिपनोसोमता का निदान हुआ व उनके उपचार से भैंस ठीक होकर उठ खड़ी हुयी। तुरंत यह बात दूर तक फैल गयी। ऐसे कई रोगी पशु इलाज से ठीक हो गये। क्षेत्र के लोगों को ज्ञात हुआ कि यह जादू उदय प्रताप कालेज, बनारस के पूर्व छात्र डा. चिंतामणि सिंह का है। वहीं के एक प्रभावी ठाकुर साहब ने उन्हें भोजन पर आमंत्रित किया। जब डा. चिंतामणि ने अपने दल की भोजन–पानी की समस्या की जानकारी दी तो ठकुराइन ने कहा– सभी को भोजन उनके स्थान पर पहुँच जाया करेगा। बाद में इस रोग का प्रकोप 13 जिलों में घोषित किया गया।

डा. चिंतामणि के कार्य से पशुपालन विभाग के उपनिदेशक, सरदार बहादुर ऊधम सिंह, निदेशक आर. एल. कौरा तथा अन्य अधिकारी प्रभावित हुये। युवा डा. चिंतामणि बहुत मेहनती था तथा एक दिन तो उन्होंने कमाल ही कर दिया, जब उसने पशु उपचार हेतु 70–75 किलोमीटर साइकिल चलायी। उन दिनों ग्रामीण क्षेत्रों में पशुओं की महामारी 'रिंडरपेस्ट' का बहुत प्रकोप था तथा सैकड़ों पशु इससे कालग्रस्त होते थे। पशु चिकित्सक कुछ नहीं कर पाते थे। उसी समय मुक्तेश्वर प्रयोगशाला में जी टी वी बकरी ऊतक टीके की खोज हुयी। डाक्टर चिंतामणि ने अपने उच्च अधिकारियों से पूछा कि इन पशुओं को बचाने के लिये क्या कुछ किया जा सकता है? जबाब मिला–कुछ भी नहीं। इस पर वे बहुत निराश हुये। तभी निदेशक पशुपालन ने उन्हें मुख्यालय में पदस्थ करने का निर्णय लिया।

वेट्रनरी कालेज, मथुरा आगमन

शीघ्र ही उन्हें वेट्रनरी कालेज, मथुरा में डिमांस्ट्रेटर / शोध सहायक पद पर नियुक्ति मिली। यहाँ आपने शरीर क्रिया तथा जीव रसायन विभाग में प्रोफेसर ए. राय के मातहत कार्य किया। कुल मिलाकर आप सन् 1947–52 तक मथुरा में प्रथम चरण में सेवारत रहे। मथुरा पहुँचते–पहुँचते डा. चिंतामणि ने अनुसंधान हेतु अमेरिका जाने का दृढ़ निश्चय कर लिया था। सौभाग्यवश डा. सिंह के अमेरिका में उच्च अध्ययन हेतु उत्तर प्रदेश सरकार ने स्वीकृति एवं आर्थिक सहायता प्रदान कर दी। यह समाचार इलाहाबाद के 'लीडर' नामक अखबार में छपा। जिसे अन्यों के अतिरिक्त उनके एक हेड अध्यापक श्री राम लोचन सिंह ने भी पढ़ा। वे गर्व से उद्वेलित होकर, 6 किलोमीटर पैदल चलकर उसके पिता के पास बेलांव पहुंचे। पिताजी को भी चिंतामणि की अमेरिका जाने की निश्चित तिथि 15 अगस्त, 1952 का ज्ञान नहीं था, अतः वे तुरंत मथुरा पहुंचे ताकि पुत्र को समुद्र पार यात्रा हेतु विदा कर सकें। तब तक डा. सिंह को उत्तर प्रदेश सरकार का एक तार मिल चुका था। सरकार ने वित्त न होने का तर्क देकर उनके जाने को अगले वर्ष तक स्थगित कर दिया था तथा सर्वत्र सूचित कर दिया। डा. सिंह असमंजस की स्थिति में थे। उनके पिता ने कहा– वे पढ़ने अमेरिका अवश्य जायेंगे, चाहे जमीन ही क्यों न बेचनी पड़े। पिता ने उनसे यह भी कहा–जब तक वह अमेरिका नहीं जाते हैं, तब तक वे गांव नहीं लौटेंगे। डा. चिंतामणि ने अपने

शुभचिंतकों विशेषकर पशु आनुवंशिकी एवं प्रजनन के प्रोफेसर डा. आर. बी. सिंह से सलाह की। उन्होंने तुरंत बम्बई जाने व पूर्व निर्धारित कार्यक्रमानुसार उन्हें थामस कुक कम्पनी के जहाज से अपने खर्च पर अमेरिका जाने की सलाह दी। उन्होंने यह भी कहा–यदि इस जहाज से जाना संभव न हो तो वह अगली तिथि के टिकट बुक करा लें।

श्रीमती चंद्रजोत सिंह को मथुरा में एक दिन अपनी पूर्व प्रधानाचार्य मिस विमला तिवारी का वृंदावन आने का पत्र मिला। वे डा. सिंह सहित उनसे मिलने वृंदावन पहुँचीं। प्रधानाचार्य मिस तिवारी वहाँ धर्मशाला मे ठहरी थीं। उनसे मिलने से पहले ही डा. सिंह सहित वे गौरांग महाप्रभु के मंदिर पहुँची तथा गुरु महाराज के दर्शन किये। उस समय गुरु जी पूजा–ध्यान में व्यस्त थे। डा. सिंह की भाव–भंगिमा से वह उनकी कम आस्तिक प्रवृत्ति को समझ गये। श्रीमती सिंह का कहना है कि गुरुजी का ऐसा कुछ प्रभाव हुआ कि वे मात्र एक रात्रि के लिये वृंदावन आये थे किंतु वहाँ एक सप्ताह तक रुके रहे व प्रतिदिन सत्संग सुनते रहे। महाराज जी के दर्शन से डा. सिंह में धार्मिक प्रवृत्ति जागृत हुयी। इसके पश्चात् वे निरंतर सत्संग सुनने के लिये वृंदावन जाते रहे। उस मंदिर का नियम था कि वहाँ रात्रि दस बजे के पश्चात् स्त्रियां नहीं ठहर सकती हैं, अतः डा. सिंह सपरिवार धर्मशाला में रुकते थे।

अमेरिका प्रस्थान

जब डा. सिंह बम्बई को चलने लगे तो श्रीमती सिंह ने कहा– 'आप अमेरिका अवश्य जाओगे'। उन्हें अपने पति की समुद्री अमेरिका यात्रा का सपना दिख चुका था। अचानक कार्यक्रम बनने के कारण चलते समय वे पिता के चरण स्पर्श भी नहीं कर सके क्योंकि उस समय वे टहलने गये थे। अब से लगभग पचास वर्ष पूर्व लोग समुद्र मार्ग से अमेरिका जाया करते थे। बम्बई से दस दिन की यात्रा के पश्चात् नेपल्स तथा नेपल्स से पंद्रह दिन की यात्रा के पश्चात् अमेरिका पहुंचा जाता था। डा. सिंह के समक्ष सुनिश्चित टिकट / वीसा आदि की समस्या थी। संयोगवश समस्त भारत का स्वतंत्रता दिवस 15 अगस्त होने के कारण छुट्टी थी तथा कार्यालय बंद थे। डा. सिंह को थामस कुक कम्पनी के अधिकारी ने कहा– अम्बेसडर जहाज में आयेंगे तथा वे उन्हें यात्रा करने की अनुमति प्रदान कर सकते हैं। डॉ. सिंह के लिये यह उहापोह

वाला समय था। उनके मन में दृढ़ विश्वास था–यह जहाज बिना मुझे लिये नहीं जायेगा। अ ।डर ने उनकी समस्या सुनी तथा बिना कोई उत्तरदायित्व लिये उन्हें अमेरिका २ ा हेतु अनुमति प्रदान कर दी। डा. सिंह ने अपने पास की सारी धनराशि किसी अधिकारी को सौंप दी तथा उनसे यात्रा पर जाने का प्रबंध करने की व्यवस्था करने की विनती की। कहते हैं, ईश्वर उसकी सहायता करता है, जो स्वयं अपनी सहायता करता है। लंगर खुलने के कुछ ही घंटों के पश्चात् डा. सिंह के टिकट, वीसा तथा अन्य सभी कागज–पत्र के ठीक होने तथा विधिवत् यात्रा करने की अनुमति आ गयी। अब उनकी प्रसन्नता की सीमा का अंत नहीं था। गढईया के कमल – डा. चिंतामणि सिंह के कदम उच्च अध्ययन हेतु अमेरिका की धरती पर पड़ने में मात्र कुछ ही दिनों का अंतर था।

पी–एच.डी. अध्ययन

डा. सिंह ने पी–एच.डी. के दौरान प्रमुख विषय पशु विकृतिविज्ञान के अतिरिक्त सूक्ष्म जीवाणुविज्ञान, सार्वजनिक स्वास्थ्य एवं पशु–पालन विषयों का अध्ययन किया। डा. सिंह ने गिल्टेनर हाल में 22 मई सन् 1956 को पशु विकृतिविज्ञान विभाग, स्कूल फार एडवांस ग्रेजुयेट स्टडीस आफ मिशीगन स्टेट यूनीवर्सिटी ऑफ एग्रीकल्चर एंड एप्लाइड साइंस, मिशीगन राज्य, अमेरिका में पी–एच.डी. उपाधि प्राप्त करने के लिये अंतिम परीक्षा दी। आप की शोध प्रबंध का शीर्षक था "Pathology and Bacteriology of abortion and perinatal death of young in rabbits, sheep and goats induced by *Listeria monocytogenes*" ।

यह उपाधि आपने डा. सी.सी. मॉरिल पशु विकृतिविज्ञान विभाग के अध्यक्ष के निर्देशन में पूर्ण किया। डा. मॉरिल उनकी प्रेरणा के स्रोत, ऊतक विकृतिविज्ञानी अन्वेषण के मार्ग दर्शक तथा शोध प्रबंध लेखन में अपूर्व सहायताकर्ता थे। डा. एम.एल. ग्रे सहायक आचार्य ने उनके कार्य में अपेक्षा से कहीं अधिक रूचि ली तथा उन्हें अन्वेषण के जीवाणुविज्ञानी क्षेत्र में मार्गदर्शन, शोध प्रबंध लेखन और चित्र तैयार करने में सहायता की। विश्वविख्यात डा. आर.ए. रनल्स आचार्य एवं पूर्व–विभागाध्यक्ष पशु विकृतिविज्ञान विभाग ने अपने ज्ञान से उन्हें प्रोत्साहित किया। स्वर्गीय डा. फ्रेंक थोर्प जूनियर ने भी अन्वेषण के प्रारंभ में उनकी सहायता और मार्गदर्शन किया। डा. सिंह डा. डी.

एच. मैकवर्ड विकृतिविज्ञान विभाग, डा. आर.एच. नेल्सन विभागाध्यक्ष, पशु पालन विभाग, डा. डब्लू एन. मैक सूक्ष्म जीवाणुविज्ञान और सार्वजनिक स्वास्थ्य विभाग के आचार्य की सहायतार्थ सलाहों से लाभान्वित हुये। पी–एच. डी. अध्ययन के दौरान, मिशीगन कृषि विभाग के विकृतिविज्ञानी डा. हैंस रूहलैण्ड ने शोध पत्रों के जर्मन अनुवादों से बहुमूल्य सहायता की तथा पुस्तकालय कर्मी मैरी कालीवोडा ने संदर्भ प्रदान कर सहायता की। पशु–चिकित्सा विज्ञान महाविद्यालय तथा इस विश्वविद्यालय के अन्य विद्यालयों के अनेक लोगों ने बिना किसी स्वार्थ के उनकी तरह–तरह से उनके प्रशिक्षण व कार्य के समय सहायता की तथा अन्वेषण के दौरान तकनीकी मदद भी की। डा. सिंह को इस अध्ययन हेतु मिशीगन राज्य विश्वविद्यालय ने छात्रवृत्ति और सहायकवृत्ति प्रदान की। चैस फाइजर कम्पनी इंक, टेरी हौटे, इंडियाना ने उन्हें एक अनुदान प्रदान किया। ईस्ट लंसिंग कम्यूनिटी की श्रीमती एवं श्री इ.डी. हैरीसन तथा अन्य मित्रों ने उनकी देश से दूर घर के सदस्यों जैसी देखभाल की।

डा. सिंह के शोध–प्रबंध का सार इस प्रकार है–

Pathology and Bacteriology of abortion and perinatal death of young in rabbits, sheep and goats induced by *Listeria monocytogenes*

CHINTAMANI SINGH

ABSTRACT

Studies on the pathology and bacteriology of abortion and perinatal death (stillbirth and early death) of young in rabbits, sheep and goats induced by *Listeria monocytogenes* were undertaken to help explain the role of the bacterium in this syndrome.

Pregnant, non-pregnant and male rabbits and goats and pregnant sheep were exposed either by conjunctival instillation of suspensions of the bacterium or by adding them to the drinking water.

Conjunctival exposure of pregnant rabbits resulted not only in a marked conjunctivitis but also in abortion when the

doe was exposed early in gestation; when the exposure was late in gestation, the young were either stillborn or died within a few days due to listeric septicemia. Conjunctival exposure of non-pregnant rabbits resulted in marked conjunctivitis and a low-grade and otherwise in apparent infection. Conjunctival exposure of goats resulted in a very mild eye reaction but caused death of a pregnant goat due to listeric encephalitis and induced encephalitic lesions in a castrated male goat.

These findings establish the fact that the infection resulting from conjunctival instillation of *L. monocytogenes* does not remain localised in the conjunctiva.

Oral exposure of pregnant rabbits, sheep and goats resulted in abortion if the dams were exposed early in gestation; if the exposures were late in gestation, the young were either stillborn or died within a few days due to listeric septicemia. Non-pregnant animals exposed in the same manner suffered a low-grade inapparent infection.

L. monocytogenes was readily isolated from aborted foetuses, young born at term, placenta and from the dams which died due to septicemia.

The results suggest the uterus as the principal target of infection in pregnant animals. If the entire conceptus was expelled, the defense mechanism of the dam could successfully combat the relatively few remaining bacteria as in the non-pregnant. However, retention of infected conceputs (1) caused localized suppuration, (2) constituted a source of infection which resulted in subsequent abortions if the dam was rebred within 6 days, or (3) caused death from septicemia.

No evidence of immunity could be demonstrated in rabbits (at least within 2-6 months) following survival of any form of exposure under the conditions of these experiments.

The various clinical syndromes of listeric infections apparently vary with species, route of exposure and state and stage of pregnancy.

The most prominent pathological findings in aborted

fetuses and the young which died perinatally included necrotic foci in the liver and less frequently in the heart, lung, kidney, stomach and gall bladder, with necrotic debris, in the hepatic bile ducts; fibrinous exudate on the surface of liver and intestine; moderate hydroperitoneum. The bacterium could be demonstrated in tissue sections of most of these organs. Examination of dams which died or were sacrificed revealed necrotic endometritis with variable amount of caseous to purulent exudate. Numerous necrotic foci and thrombi were noticed in the myometrium. The bacterium could be demonstrated in tissue sections of the uterus including the cotyledons.

कुत्तों के संक्रामक यकृतशोथ या इनफैक्सियस कैनाइन हिपेटाइटिस टीके की खोज

अमेरिका में पोस्ट डाक्टरल छात्र के रूप में डा. चिंतामणि सिंह ने कुत्तों के प्रमुख विषाणु रोग 'कैनाइन हिपेटाइटिस' टीके पर शोध प्रारंभ किया। उन्होंने ऊतक संवर्धन द्वारा विषाणु को अनुकूलित किया तथा अंततः इसका टीका खोजने में सफल रहे। इस खोज के लिये वे आम छात्रों की अपेक्षा कहीं अधिक समय प्रयोगशाला में गुजारा करते थे। कई बार अधिक कार्य करने के कारण उनकी प्रयोगशाला में कांच के पात्रों (ग्लासवेयर) का अभाव हो जाता था। इसका अधिक प्रयोग होने के कारण ग्लासवेयर धुल नहीं पाता था और उसकी समय से उपलब्धि नहीं हो पाती थी। कारण पूछने पर सम्बन्धित प्रयोगशाला के कार्यकर्ताओं ने बताया कि जितना ग्लासवेयर अन्य प्रयोगशालाओं में एक सप्ताह में प्रयोग होता है, आप उतना दो–तीन दिनों में उपयोग करते हैं। उन्होंने इस बात की जानकारी अपने प्रोफेसर को दी। डा. चिंतामणि सिंह जब प्रातः अपनी लैब पहुंचे तो वहां पर्याप्त ग्लासवेयर रखे मिले, जिसे संस्थान के भण्डार से प्राप्त किया गया था। इसके पश्चात् आप पशु–चिकित्सा विषाणु संस्थान, कार्नल विश्वविद्यालय, अमेरिका में पोस्ट–डाक्टरल फेलो रहे। तत्पश्चात् आप स्वदेश वापस आ गये तथा पशु–चिकित्सा विज्ञान महाविद्यालय, मथुरा में योगदान दिया।

मथुरा जंक्शन पर 40–45 छात्रों, कुछ डिमांस्ट्रेटर/शोध सहायक तथा पशु–प्रजनन तथा आनुवंशिकी के प्रो. आर. बी. सिंह उपस्थित थे। डा. चिंतामणि सिंह अमेरिका से अपना अध्ययन पूर्ण कर भारत वापस आ रहे थे। छात्रों का यह उत्साही समूह डा. चिंतामणि सिंह के स्वागत के लिये उपस्थित था। गाड़ी आयी, डा. सिंह का उत्साहपूर्वक स्वागत हुआ। इन स्वागतकर्ताओं में डा. राम रक्ष शुक्ल भी थे, जो उस समय वेट्रनरी कालेज मथुरा में छात्र थे तथा यह घटना सुनायी। उस समय विकृति विज्ञान के प्राध्यापक के पद का विज्ञापन निकल चुका था तथा डा. सिंह इस पद के आकांक्षी ही नहीं अपितु प्रबल दावेदार थे।

अध्याय – तीन

प्रोफैसर पद पर नियुक्ति तथा शोध उपलब्धियां

डा. सिंह ने सन् 1957 में वेट्रनरी कालेज, मथुरा में विकृति विज्ञान और जीवाणु विज्ञान के प्राध्यापक पद पर योगदान दिया तथा इस पद पर आप सन् 1964 तक कार्य करते रहे। यह समय आपके जीवन का 'टर्निंग प्वाइंट' था। इस काल के अध्ययन एवं अनुसंधान से आपकी ख्याति देश–विदेश में फैली। विकृति तथा जीवाणु विज्ञान के स्नातकोत्तर छात्रों का मथुरा में प्रो. सिंह के मार्गदर्शन में शोध कार्य करने का तांता लग गया। आपने विकृति विज्ञान में क्रमशः 2 तथा 10 और जीवाणु एवं विषाणु विज्ञान में 2 तथा 21 पी–एच. डी. एवं एम. वी. एस–सी. छात्रों का मार्गदर्शन किया। प्रो. सिंह के मार्गदर्शन में किये शोध–प्रबंधों तथा महत्वपूर्ण उपलब्धियों की सूची आगामी पृष्ठों में दी गयी है।

माइकोप्लाज्मा में नयी खोजें

वेट्रनरी कालेज, मथुरा में प्रो. चिंतामणि सिंह ने मुर्गी के नमूनों की हिस्टोपैथोलोजी स्लाइडस का निरीक्षण करते हुये फेफड़ों में माइकोप्लाज्मा की विशिष्ट क्षतियां पायीं। उन्होंने ऐसी मुर्गियों के नमूनों के सीरम को 58 डिग्री सेल्सियस ताप पर उपचार के पश्चात् अमेरिका भेजा। वहां की विशिष्ट रिपोर्ट पाकर प्रो. सिंह उछल पड़े और अपने छात्र डा. आर. सी. पाठक को इसे पृथक्कीकृत (आइसोलेट) करने को कहा। कुछ दिनों में इस रोगजनक का प्रथम बार भारत में 'आइसोलेशन' हुआ।

उन्हीं दिनों भारत में मुर्गी रोगों के अथारिटी विकृति विज्ञानी डा. कैप्टन राव ने इसी विषय पर एक पेपर लिखा तथा माइकोप्लाज्मा विलगन (आइसोलेशन) न होने की बात कही। उसी वर्ष पुणे में अखिल भारतीय रोग अन्वेषण गोष्ठी (डी.आई. कांफ्रेंस) आयोजित हुयी। प्रो. चिंतामणि सिंह वहाँ

अपने निजी खर्चे से गये क्योंकि उ. प्र. सरकार से समय पर वहाँ जाने की अनुमति नहीं आ सकी थी। उक्त तकनीकी सत्र की अध्यक्षता भारतीय पशु–चिकित्सा अनुसंधान संस्थान के पूर्व निदेशक तथा पशुपालन आयुक्त, भारत सरकार डा. लक्ष्मी सहाय कर रहे थे। अपना शोध–पत्र प्रस्तुत करते हुये जब प्रो. सिंह ने भारतीय पशु–चिकित्सा अनुसंधान संस्थान की इस कार्य में असफलता का उल्लेख किया तो कैप्टन राव बहुत नाराज हो गये। कैप्टन राव ने अपना पूर्ण जीवन कुक्कुट रोगों के अनुसंधान में गुजारा था। डा. लक्ष्मी सहाय ने उनकी पूरी बात सुनी तथा कहा– 'कैप्टन राव, हमें युवा प्रो. सिंह की बात सुननी चाहिये।' तब प्रो. सिंह ने बताया कि उन्होंने माइकोप्लाज्मा आइसोलेशन हेतु नई विधि का प्रयोग किया है, जिसे वे अमेरिका से सीखकर आये हैं। इसमें एक विशेष रसायन का प्रयोग किया जाता है, जो मृतजीवी जीवाणुओं की वृद्धि को रोकता है। उन्होंने माइकोप्लाज्मा की कालोनी का भी वर्णन किया। प्रो. सिंह की सम्पूर्ण प्रस्तुति का व्यापक असर हुआ। कैप्टन राव भी इससे संतुष्ट हुये तथा उन्होंने प्रो. सिंह से कहा– आपने अपने कार्य की पूर्ण जानकारी उन्हें पहले क्यों नहीं दी। जब डा. लक्ष्मी सहाय को ज्ञात हुआ कि प्रो. सिंह डी. आई. कांफ्रेस में निजी व्यय पर आये हैं तो उन्होंने इस मौलिक शोध कार्य की चर्चा करते हुये उत्तर प्रदेश सरकार को प्रो. सिंह का योगदान लिखा। प्रो. सिंह के इस कार्य की सर्वत्र प्रशंसा हुयी और उन्हें व्यापक प्रसिद्धि मिली।

कालान्तर में प्रो. सिंह ने इसी भाँति कुक्कुट के अन्य रोगों संक्रामक श्वसनीशोथ (आई.बी.) संक्रामक श्वरयंत्र श्वास प्रणालशोथ (आई.एल.टी.) तथा साल्मोनेल्लता पर अनुसंधान किया।

पाठ्य पुस्तकों में उद्धृत : प्रो. सिंह के कुछ शोध–पत्र

राज्या, बी.एस. एंड सिंह, सी.एम. (1961) स्टडीज ऑन द पैथोलोजी ऑफ जोन्स डिसीस इन शीप III पैथोलोजी : चेंजेज इन शीप विद नेचुरली अकरिंग इनफेक्शंस। अमेरिकन जर्नल ऑफ वेट्रनरी रिसर्च 22, 189–203।

संदर्भ : – वेट्रनरी पैथोलोजी – पृष्ठ 664।

चौहान, एच.बी.एस. एंड सिंह, सी.एम. (1971) स्टडीज आन द पैथोलोजी ऑफ पल्मोनरी एडीनोमेटोसिस काम्पलैक्स ऑफ शीप एण्ड गोट्स II वाइरल निमोनाइटिस (एटिपीकल निमोनिया) इंडियन जर्नल ऑफ एनीमल साइंसेस, 41 : 272–276।

संदर्भ : वेट्रनरी पैथोलोजी – पृष्ठ, 470।

डा. सिंह इत्यादि द्वारा सूक्ष्म रोगाणुओं तथा इनसे जनित रोगों की भारत/विश्व से प्रथम आघटन प्रतिवेदन

- कुक्कुटों में प्लूरोनिमोनिया किस्म के जीवाणुओं का आघटन (अदलखा एवं सिंह, 1962)।
- कुक्कुटों के क्राप्स से कैंडिडा प्रजातियों की प्राप्ति (पाठक एवं सिंह, 1962)।
- सूकर से एक नया और असामान्य सीरमी प्रारूप *साल्मोनेल्ला* वृन्दावन (भखोलिया एवं सिंह, 1963)।
- एक नया सीरमी प्रारूप *साल्मोनेल्ला ब्रजभूमि* (शर्मा एवं सिंह, 1963)।
- सूकरों में एक नया सीरमी प्रारूप *साल्मोनेल्ला गोकुल* (दत्ता एवं सिंह, 1964)।
- सीवेज जल से एक नया सीरमी प्रारूप *साल्मोनेल्ला गोवर्धन* (शर्मा एवं सिंह, 1967)।
- भारत में कुक्कुटों में संक्रामक ब्रोंकाइटिस का आघटन (वर्मा, सिंह एवं सिंह, 1968)।
- कुक्कुटों में कैंडिडता (सिंह एवं सिंह, 1971)।
- बकरियों में *कैंडिडा पैराक्रूसाई* का संक्रमण (सिंह एवं सिंह, 1972)।
- कुक्कुटों में *ट्राइकोफाइटान सिमी* संक्रमण (सिंह एवं सिंह, 1968)।

प्रो. सिंह के मार्गदर्शन में जीवाणु विज्ञान में आगरा विश्वविद्यालय, आगरा में जमा हुयी पी-एच.डी. थीसिस

★ पाठक, आर सी (1967) स्टडीज ऑन द सो काल्ड बूसेल्ला एग्लूटिनेशन रियक्शंस इन बोवाइंस एंड द यूज ऑफ ए साल्लुबल एंटीजेन फ्राम ब्रुसेल्ला एबार्टस।

★ शर्मा, वी के (1967) स्टडीज आन न्यू–सीरोटाइप्स ऑफ साल्मोनेल्ला।

प्रो. सिंह के निर्देशन में विकृति विज्ञान में पी-एच.डी. थीसिस

★ राज्या, बी एस (1963) पैथालोजी ऑफ निमोनिया एंड एसोसियेटेड रेस्पिरेटरी डिसीसेस इन शीप एंड गोट्स।

★ द्विवेदी, जे एन (1968) स्टडीज आन द पैथालोजी ऑफ द फीमेल रिप्रोडक्टिव आर्गन्स ऑफ इंडियन बफैलोस।

★ सिंह, बलवंत (1969) स्टडीज आन द पैथोलोजी ऑफ बोवाइन लिम्फोसार्कोमा/ल्यूकीमिया इन इंडियन बफैलोस।

★ चौहान, एच वी एस (1969) स्टडीज आन द पैथोलोजी ऑफ पल्मोनरी एडीनोमेटोसिस कॉम्पलैक्स ऑफ शीप एंड गोट्स।

★ परिहार, एन एस (1970) स्टडीज आन द पैथोलोजी ऑफ एवियन रेस्पीरेटरी डिसीजेस।

★ शर्मा, यू के (1977) पैथोलोजी ऑफ रिप्रोडक्टिव आर्गन्स एंड रिलेटेड इंडोक्राइन ग्लैण्डस इन पुलेटस।

प्रो. सिंह के मार्गदर्शन में जीवाणु विज्ञान में आगरा विश्वविद्यालय, आगरा में जमा हुयी एम.वी.एस-सी. थीसिस

★ पाठक, आर सी (1959) स्टडीज आन सर्टेन माइक्रोआर्गेनिज्म एंड कैंडिडा इन इंडियन कंडीशंस।

★ सिंह, जी (1959) बैक्टीरियोलोजिकल स्टडीज ऑफ बोवाइन सीमेन एज कलेक्टेड फार आर्टीफीयिशल इनसेमीनेशन।

★ मलिक, बी एस (1959) स्टडीज आन स्ट्रैप्टोकोकाई विद पर्टीकुलर रेफरेंस टू स्ट्रेंस ऑफ बोवाइन अडर।

★ कसातिया, एस एस (1960) स्टडीज आन *इस्चीरिया कोलाई* विद स्पेशल रेफरेंस टू पोल्ट्री।

★ शर्मा, वी के (1960) स्टडीज आन द साल्मोनेली फ्राम डोमेस्टिक एनीमल्स विद स्पेशल रेफरेंस टू पोल्ट्री।

★ अदलखा, एस सी (1960) स्टडीज आन द माइक्रोफ्लोरा ऑफ रेस्पिरेटरी ट्रेक्ट ऑफ पोल्ट्री विद स्पेशल रेफरेंस टू प्लूरोनिमोनिया लाइक आर्गेनिज्मस।

★ बक्सी, एस एन (1961) बैक्टीरियोलोजिकल स्टडीज आन मिल्क फ्राम काऊस एण्ड बफैलोस विद स्पेशल रेफरेंस टू वैरियस सीरोटाइप्स बिलोंगिंग टू ग्रुप 'बी' एण्ड 'सी' स्ट्रैप्टोकोकाई।

★ शर्मा, एस पी (1961) स्टडीज आन द अकरेंस ऑफ साल्मोनेल्ला इन डोमेस्टिक एनीमल्स एंड पोल्ट्री इन उत्तर प्रदेश।

★ मखोलिया, बी डी (1962) स्टडीज आन द अकरेंस ऑफ साल्मोनेल्ला सीरोटाइप्स इन पिग्स इन रिलेशन टू पब्लिक हेल्थ।

★ सिंह, एस बी (1962) स्टडीज आन द प्लूरोनिमोनिया लाइक आर्गेनिज्मस एंड अदर फिल्ट्रेबिल एजेंट्स एशोसियेटेड विद क्रोनिक रेस्परेटरी डिसीस ऑफ पोल्ट्री।

★ तिवारी, आर पी (1962) स्टडीज आन द सम मायकोटिक इनफैक्शंस ऑफ डोमेस्टिक एनीमल्स एंड पोल्ट्री।

★ दत्ता, एस (1963) स्टडीज आन द अकरेंस ऑफ साल्मोनेल्ला फ्राम वैरियस सोर्सेस।

★ द्विवेदी, के पी (1963) स्टडीज आन द अकरेंस ऑफ लैप्टोस्पाइरल इनफैक्शंस इन डोमेस्टिक एनीमल्स एण्ड रोडेन्टस।

★ गुप्ता, आर एन (1963) स्टडीज आन द फाज टाइपिंग ऑफ *इस्चीरिचिया कोलाई* स्ट्रेंस फ्राम डोमेस्टिक एनीमल्स एंड पोल्ट्री।

★ सिंह, जी आर (1963) स्टडीज आन द अकरेंस ऑफ वायरसेस इन रेस्पिरेटरी ट्रेक्ट ऑफ पोल्ट्री।

★ सिंह, एम पी (1963) स्टडीज आन द अकरेंस ऑफ मायकोटिक इनफेक्शंस इन डोमेस्टिक एनीमल्स एंड पोल्ट्री।

★ कुलकर्णी, एम एन (1963) स्टडीज आन द सीरोलोजी एण्ड फाज टाइपिंग ऑफ *इस्चीरिचिया कोलाई* फ्राम पोल्ट्री।

★ पंडा, पी सी (1964) स्टडीज आन द इंफेक्शियस लैरिंजो ट्रेकियाईटिस वायरस ऑफ पोल्ट्री विद स्पेशल रेफरेंस टू टिसू कल्चर सिस्टम।

★ पाटिल, आर जी (1964) स्टडीज आन द साल्मोनेल्ला इन पोल्ट्री विद स्पेशल रेफरेंस टू सीरोलोजिकल टेस्टिंग फार पुलोरम डिसीस।

★ वर्मा, के सी (1964) स्टडीज आन द इनफेक्शियस ब्रोंकाइटिस ऑफ पोल्ट्री।

★ मंडकोट, उषा (1965) स्टडीज आन द इनफेक्शियस लैरिंजोट्रेकियाइटिस वायरस ऑफ पोल्ट्री विद स्पेशल रेफरेंस टू सीरोलोजी।

प्रो. सिंह के मार्ग दर्शन में आगरा विश्वविद्यालय, आगरा में जमा हुयी विकृति विज्ञान विषय में एम.वी.एस-सी. थीसिस

★ राज्या, बी एस (1958) पैथालोजी ऑफ जोन्स डिसीस इन शीप।

★ कुलश्रेष्ठ, डी सी (1960) स्टडीज आन द पैथोलोजी ऑफ बोवाइन नियोप्लाजम्स विद स्पेशल रेफरेंस टू हार्न कैंसर।

★ रिचारिया, वी एस (1960) पैथोलोजी ऑफ बोवाइन किडनी।

★ अवधिया, आर पी (1960) स्टडीज आन द पैथोलाजी ऑफ एवियन ल्यूकोसिस काम्पलैक्स।

★ द्विवेदी, जे एन (1961) स्टडीज आन द पैथोलाजी ऑफ निमोनिया एंड एशोसियेटेड पल्मोनरी डिसीसेस इन कैटल एंड बफैलोस।

★ मोहन्ती, जी सी (1961) स्टडीज आन द पैथोलाजी ऑफ यूरीनरी सिस्टम ऑफ बोवाइंस विद स्पेशल रेफरेंस टू यूरोलिथीयेसिस।

★ खरे, जी पी (1961) स्टडीज आन द पैथोलाजी ऑफ रेस्पीरटेरी सिस्टम ऑफ पोल्ट्री विद स्पेशल रेफरेंस टू क्रानिक रेस्पीरेटरी डिसीसेस।

★ सिंह, के पी (1962) स्टडीज आन द पैथोलाजी ऑफ बोवाइन कार्डियो वैस्कुलर सिस्टम।

★ सिंह, बी (1962) पैथोलोजी ऑफ क्रानिक रेस्पीरेटरी डिसीसेस ऑफ पोल्ट्री।

★ शर्मा, डी एन (1964) स्टडीज आन द पैथोलाजी ऑफ फीमेल जेनाइटल ट्रेक्ट ऑफ पोल्ट्री विद स्पेशल रेफरेंस टू एग पेरीटोनाइटिस।

★ नाथ, आर (1967) पैथोलोजी ऑफ यूरो-जेनाइटल सिस्टम ऑफ पोल्ट्री।

★ सदाना, जे आर (1968) ए स्टडी ऑफ द पैथोलोजी ऑफ बेबी पिग मारटेलिटी विद स्पेशल रेफरेंस टू इट्स इंसीडेंस इन पंजाब एंड हरियाणा।

★ महाजन, एस के (1968) स्टडीज आन द पैथोलाजी ऑफ यूरीनरी सिस्टम ऑफ बोवाइन विद स्पेशल रेफरेंस टू यूरोलिथीयेसिस।

पी-एच. डी. कार्यक्रम का प्रारंभ

वेट्रनरी कालेज, मथुरा में प्रोफेसर चिंतामणि सिंह पशु-चिकित्सा संकाय (वेट्रनरी फैकल्टी) के डीन भी थे। वे कालेज में स्नातकोत्तर कार्यक्रम के अन्तर्गत पी-एच. डी. की शुरुआत करवाना चाहते थे। उन दिनों वेट्रनरी कालेज, मथुरा में कुछ प्रोफेसरों का वर्ग इस कार्य को सफल नहीं होने दे रहा था। वे चाहते थे कि जीवाणु, विकृति तथा परजीवी विज्ञान में मिली-जुली पी-एच. डी. उपाधि (डिग्री) हो जबकि प्रो. चिंतामणि सिंह की कामना थी कि

तीनों विषयों में अलग–अलग डिग्री एवार्ड हो। कालेज से ऐसा प्रस्ताव आगरा विश्वविद्यालय नहीं जा सका। इस पर विश्वविद्यालय ने आपत्ति की, तब पशु–चिकित्सा संकाय की बैठक आयोजित हुयी। उपर्युक्त विषय पर चर्चा हुयी। प्रो. चिंतामणि ने तर्क दिया, जिस प्रकार से जूलोजी, बाटनी, कैमिस्ट्री आदि की अलग–अलग पी–एच. डी. उपाधियां हैं, उसी प्रकार से जीवाणु, विकृति तथा परजीवी विज्ञान विषयों की अलग–अलग पी–एच. डी. की उपाधियां होनी चाहिये। रजिस्ट्रार तथा कुलपति आदि ने प्रस्ताव पर सहमति दी और अंततः प्रत्येक विषय में अलग–अलग डिग्रियां एवार्ड करने का फैसला हुआ।

अधो–स्नातक परीक्षाओं का स्वरुप

काफी समय तक में आगरा विश्वविद्यालय में प्रथम, द्वितीय सत्र तथा वार्षिक परीक्षा की पद्धति रही। वह डा. सिंह के अधिष्ठाता काल में लागू की गयी थी। इस पद्धति के अंतर्गत सत्र के 3 एवं 6 माह पश्चात 12.5 +12 5 कुल 25 प्रतिशत अंकों की आंतरिक परीक्षायें तथा 75 प्रतिशत अंकों की वार्षिक परीक्षाओं में प्रश्न पत्र बाह्य परीक्षक द्वारा बनाया जाता है। प्रयोगात्मक परीक्षाओं हेतु बाह्य परीक्षक बुलाया जाता है। इस पद्धति से छात्रों का भली–भाँति मूल्यांकन होता है तथा शिक्षा का उच्च स्तर बना रहने में सहायता मिलती है।

प्रो. सिंह श्रेष्ठ अध्यापक एवं अनुसंधानकर्ता रहे हैं : प्रो. एम. पी. बंसल

स्वयं भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली द्वारा वर्ष 1996 में बीस हजार रुपयों के श्रेष्ठ अध्यापक पुरस्कार प्राप्तकर्ता, सेवानिवृत्त प्रभारी, प्रतिरक्षा विज्ञान अनुभाग, विख्यात विषाणु विज्ञानी, खरी और कड़ी बात को कहने वाले प्रो. एम.पी. बंसल वेट्रनरी कालेज, मथुरा में डा. सी.एम. सिंह के छात्र रहे हैं। आप लिम्फोसार्कोमा परियोजना में विषाणु विज्ञानी पद पर मौलिक खोजों द्वारा अपार ख्याति प्राप्त कर चुके हैं। एक बातचीत के दौरान प्रो. बंसल ने डा. सी.एम. सिंह के विषय में तीन बातों पर मुख्यतः प्रकाश डाला, जिसका सार–संक्षेप यहां प्रस्तुत है–

प्रोफेसर सिंह यद्यपि स्नातकोत्तर छात्रों को मथुरा में नियमित रूप से तो नहीं पढ़ाते थे किंतु वे सप्ताह में एक–दो कक्षायें अवश्य लेते थे। उनका

प्रयास रहता था कि जो पाठ प्रवक्ताओं, सहायक आचार्यों ने पढ़ाया है, उसका सारांश वह पुनः बतायें। प्रो. बंसल ने इस कार्य में डा. सिंह को कठिन परिश्रमी, अत्यंत गम्भीर एवं समर्पित पाया। वे सदैव स्नातकोत्तर छात्रों को नवीनतम मौलिक एवं आधारभूत ज्ञान प्रदान करते थे। जब प्रो. सिंह स्नातकोत्तर छात्रों की कक्षा लेते थे तो पढ़ाने में वे इतना लीन हो जाते थे कि उन्हें समय सीमा का ध्यान नहीं रहता था। कई बार 8–9 बजे देर रात तक लैक्चर चलता रहता था। छात्रों की भी इसमें इतनी अधिक रुचि रहती थी कि वे भी विघ्न उत्पन्न नहीं करते थे।

स्नातकोत्तर शोध छात्रों को प्रो. सिंह विषय बता देते थे तथा कुछ दिनों तक चुप रहते थे। छात्र को लगता था कि शायद वह भूल गये हैं। इस दौरान वह छात्रों को उक्त विषय के अध्ययन एवं संदर्भ एकत्र करने का अवसर प्रदान करते थे। उनकी कामना रहती थी कि छात्र के आस–पास उक्त विषय की ज्ञान गंगा बहती रहे। प्रो. सिंह चाहते थे कि स्नातकोत्तर छात्रों के शोध परिणाम अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के हों। इसके लिये वह पूर्ण मदद करने को तत्पर रहते थे। वे विदेशों की मान्यता प्राप्त एवं संदर्भ प्रयोगशाला से प्रतिजन (एंटीजेन), सीरा, पृथक्कीकृत (आइसोलेट) इत्यादि मंगवाया करते थे। पुष्टिकरण हेतु पृथक्कीकृत विदेशों की प्रयोगशालाओं को भिजवाते थे। इन्हीं सब प्रवृत्तियों के कारण प्रो. सिंह के छात्रों के शोध–पत्र नेचर, इन्टरनेशनल जर्नल ऑफ सिस्टेमेटिक बेक्टीरियोलोजी, इन्टरनेशनल जर्नल ऑफ कम्परेटिव पैथोलोजी, बुलेटिन ऑफ बेक्टीरियोलोजिकल नामनक्लेचर एंड टैक्सोनामी तथा पोल्ट्री साइंस जैसी विश्वविख्यात अन्तर्राष्ट्रीय पत्रिकाओं में प्रकाशित हुये। इससे प्रो. सिंह व उनके छात्रों की ख्याति सर्वत्र विसरित हुई। प्रो. सिंह का हिसार में अधिष्ठाता पद पर चयन हुआ तथा कुछ ही वर्षों पश्चात् वे भारतीय पशु–चिकित्सा अनुसंधान संस्थान, इज्जतनगर में निदेशक पद पर चुने गये।

मथुरा तथा इज्जतनगर में हो रही उन दिनों की खोजों में क्या अन्तर था? इस प्रश्न के उत्तर में प्रो. बंसल कहते हैं कि मथुरा में मौलिक या मूलभूत अनुसंधान होता था जबकि इज्जतनगर में उपयोगी शोध होता था। भारतीय पशु–चिकित्सा अनुसंधान संस्थान, इज्जतनगर में प्रो. सिंह भारतीय भैंसों में ल्यूकीमिया/लिम्फोसार्कोमा नामक पी.एल.–480 परियोजना के मुख्य

अन्वेषक थे। प्रो. बंसल ने इस परियोजना में विषाणु विज्ञानी पद पर योगदान दिया। रोग के कारण विषाणु की खोज एवं विविध परीक्षणों द्वारा पुष्टि करना योजना का प्रमुख उद्देश्य व कार्य था। इसके सम्बन्ध में डा. बंसल बताते हैं कि भैंसों में लसकोशिका विलगन की उपयुक्त विधि खोजी गयी तथा इन कोशिकाओं का संवर्धन किया गया। लिम्फोसार्कोमा को कोशा रहित स्यंद द्वारा सफलतापूर्वक संचरण/प्रत्यारोपण (ट्रान्समिशन) किया गया। डा. सिंह प्रत्येक कार्य में गहन रुचि, विचार–विमर्श एवं मार्गदर्शन प्रदान करते थे। वे निदेशक पद के कार्यों में अत्यधिक व्यस्त रहने के बावजूद भी परियोजना हेतु विदेशों से आवश्यक पत्राचार एवं सुविधायें उपलब्ध करवाते थे। कई बार व्यक्तिगत रुचि लेकर रसायनों को सुलभ करवाते थे। बाद में गो जाति लिम्फोसार्कोमा का संचरण भी सफलतापूर्वक सम्पन्न हुआ। गो जाति लिम्फोसार्कोमा का एम.ए. बी. (मैब) बनाया गया, विशिष्ट ग्लाइकोप्रोटीन प्रतिजन विकसित/शुद्धिकृत हुये तथा रिवर्स ट्रांस्क्रिप्टेस पर कार्य सम्पन्न हुये। भैंस में लिम्फोसार्कोमा विषाणु की इलेक्ट्रान सूक्ष्मदर्शी द्वारा पुष्टि हुयी। सभी शोधों द्वारा अंततः यह सिद्ध हुआ कि भारतीय भैंसों में ल्यूकीमिया/ लिम्फोसार्कोमा अन्य प्रजातियों के पशुओं यथा गो जाति, बिल्ली, मूषक आदि की तरह विषाणुजन्य रोग है।

ऐसे अध्यापक रहे हैं –डा. सिंह

हम मथुरा वेट्रनरी कालेज के द्वितीय बी.वी.एस–सी. एवं ए.एच. के छात्र थे। एक दिन प्रातः काल पैथालोजी विषय के प्रवक्ता, जिन्हें हमें पढ़ाना था–अनुपस्थित थे, जिसके परिणामस्वरूप हम सभी छात्र कक्षा से बाहर खड़े गप–शप एवं शोर मचा रहे थे। यह बात प्रो. सी.एम. सिंह के संज्ञान में आयी। हालांकि वहां से उनका कार्यालय लगभग 200 मीटर दूर था। वे शांतिपूर्वक आये तथा पिछले द्वार से व्याख्यान कक्ष में प्रविष्ट हुये। यह जानकर सभी छात्रगण शांत हो गये एवं कक्षा में आ गये। प्रो. सिंह ने पिछले दिन पढ़ाये गये विषय के बारे में पूछा। यह शोथ (इनफ्लेमेशन) से सम्बन्धित था। तब उन्होंने "पायोजेनिक इनफ्लेमेशन या पूयीय शोथ पर व्याख्यान दिया तथा बताया कि यह तीव्र प्रकार का भी हो सकता है और दाढ़ी बनाने से व्युत्पन्न तीव्र शोथ का उदाहरण प्रस्तुत किया। इससे पूर्व हम द्वितीय बी.वी.एस–सी. एवं ए.एच. के छात्र यह समझते थे कि पूयीय शोथ चिरकारी प्रकार का ही होता है। प्रो. सिंह ने ज्ञान की बात बतायी। न तो उन्होंने उस प्रवक्ता से नाराजगी प्रकट की; जो

हमें अध्यापन करने नहीं आये थे और न ही शोर मचाने वाले हम छात्रों को डाँटा–फटकारा। कक्षा में उनके आने और पढ़ाने की सूचना से अध्यापकों में ऐसा प्रभाव उत्पन्न हुआ कि भविष्य में किसी प्रवक्ता ने कभी भी कोई कक्षा नहीं छोड़ी। यह बात सदैव मेरी स्मृति में रही।

डा. एम.पी. यादव निदेशक, राष्ट्रीय अश्व अनुसंधान केन्द्र, सिरसा रोड, हिसार, हरियाणा।

प्रो. सी. एम. सिंह के स्नातकोत्तर छात्र विख्यात पक्षी रोग विज्ञानी एवं विभागाध्यक्ष पक्षी रोग प्रभाग, भारतीय पशु चिकित्सा अनुसंधान संस्थान, इज्जतनगर के डा. के. सी. वर्मा वेट्रनरी कालेज, मथुरा के 1963–64 की बातों को स्मरण करते हुये बताते हैं –उन दिनों प्रो. सिंह के निर्देशन में विकृति विज्ञान एवं जीवाणु विज्ञान रोग विभाग में प्रातः से देर रात्रि तक शोध कार्य चलता था। शोध परियोजनाओं के कारण अतिरिक्त धन प्राप्त हुआ था। अतः विभाग के भवन में संशोधन सहित अनेक आधुनिक संयंत्र क्रय किये गये थे। चूंकि विभाग के कार्यालय में सीमित स्टाफ था, अतः प्रो. सिंह तथा हम छात्र सामान की खरीद सम्बंधी विवरण तथा अन्य कार्य भी करते थे। प्रो.सिंह को किसी भी प्रकार के कार्य करने में हिचक नहीं थी। डा. वर्मा के मानस पटल में एक घटना अविस्मरणीय रही है। एक बार प्रयोगशाला में एक इनक्यूबेटर में कुछ खराबी आ गयी। प्रो. सिंह उसे खिसका कर ठीक करने का प्रयास करने लगे। दुर्भाग्यवश भारी भरकम इनक्यूबेटर प्रो. सिंह पर गिर गया तथा वे उससे दब गये। तभी आवाज सुनकर विभाग से गुजर रहे एक छात्र ने तुरन्त आकर इनक्यूबेटर को हटाया तथा प्रो. सिंह की जान बचायी।

अध्याय – चार
हिसार में अधिष्ठाता

वेट्रनरी कालेज, मथुरा के जीवाणु और विकृति विज्ञान विभाग का पुनर्गठन करके पृथक–पृथक कर दिया गया तथा प्रो. सिंह को विकृति विज्ञान का प्रभार दिया गया। ऐसा करने से पूर्व उनसे कोई चर्चा या सहमति नहीं ली गयी। उसी समय तत्कालीन अविभाजित पंजाब के पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, हिसार में डीन, पशु–चिकित्सा महाविद्यालय का पद रिक्त था उन्होंने हिसार के कुलपति से सम्पर्क किया। आशा की किरण दिखने पर अचानक प्रो. सिंह छुट्टी लेकर उनसे मिलने पहुँचे। कुलपति थापर ने कहा कि वह हर कीमत पर प्रो. सिंह को अधिष्ठाता पद पर चाहते है। वे उनकी इच्छानुसार वेतन में वृद्धि व अन्य सुविधायें देने को तैयार थे। किन्तु उन्होंने प्रो. सिंह से कहा कि वे वचन दें कि वे हिसार अवश्य आयेंगे। प्रो. सिंह ने खूब-सोच विचार कर कुलपति को वचन दिया। उन्होंने अन्य सुविधायें नहीं मांगी।

एक समय था, जब प्रो. सिंह ने आजीवन मथुरा रहने का निर्णय किया था किन्तु बदली परिस्थितियों के कारण उन्हें मथुरा से जाने के लिये विवश होना पड़ा।

श्रीमती सिंह इस विषय में कहती हैं कि प्रधानाचार्य श्री चौधरी के पड़ोसी होने के नाते उनकी पत्नी एवं परिवार से उनके बहुत अच्छे सम्बंध थे। जब श्रीमती चौधरी को प्रो. सिंह के मथुरा से प्रस्थान करने का ज्ञान हुआ तो उन्होने मेजर चौधरी को कहा– आप प्रो. सिंह को कोई उच्च पद देकर रोकते क्यों नहीं है। प्रधानाचार्य चौधरी का जबाब था– किस्मत के धनी प्रो. सिंह एक बड़े पद पर जा रहे हैं। अतः इन्हें रोकना उचित नहीं होगा।

कठोर निर्णयकर्ता

प्रो. चिंतामणि सिंह कठिन निर्णय लेने में नहीं हिचकिचाते थे। परिस्थितिवश जब उन्होंने पशुपालन विभाग, उत्तर प्रदेश सरकार की 18 साल की नौकरी छोड़ने तथा तत्कालीन पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, हिसार में

डीन, पशु–चिकित्सा विज्ञान पद पर योगदान देने का निर्णय लिया तो उनकी पत्नी को कतई आश्चर्य नहीं हुआ। उस समय डा. सिंह मथुरा में 1000–1500 रुपये वेतनमान पर विश्वविद्यालय प्रोफेसर थे तथा पशुपालन विभाग, उत्तर प्रदेश में अत्यंत वरिष्ठ स्थान पर थे। जब उनका त्यागपत्र लखनऊ पहुँचा तो उत्तर प्रदेश सरकार ने उन्हें लखनऊ बुलाया तथा सचिव ने उन्हें समझाया। कहते हैं उत्तर प्रदेश के तत्कालीन कृषि मंत्री चौधरी चरण सिंह ने डा. सिंह से मथुरा में रुके रहने को कहा। उन्होंने उत्तर दिया–वे डा. थापर को वचन दे चुके हैं व अब रुकंना संभव नहीं है। डा. सिंह शास्त्रों की *सूक्ति, वचन एवं निद्रा तोड़ना नहीं चाहिये* के पालनकर्ता थे। डा. सिंह बढ़ाया हुआ कदम कभी भी पीछे नहीं हटाते थे। पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, हिसार के कुलपति थापर ने उन्हें डीन का स्थायी पद प्रदान किया। दृढता एवं कठोर निर्णय ही प्रमुख कारण था कि उन्होंने पीछे मुड़कर कभी नहीं देखा।

कुछ अविस्मरणीय प्रसंग

प्रोफेसर सिंह ने सन् 1964 में पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, हिसार (अविभाजित पंजाब) में अधिष्ठाता के पद पर योगदान दिया। यहां प्रशासनिक कार्यों में व्यस्तता के बावजूद आपने विकृति विज्ञान विषय में क्रमशः तीन–तीन एम. वी. एस–सी. तथा पी–एच. डी. छात्रों का मार्गदर्शन जारी रखा। इस पद पर आप सन् 1966 तक कार्य करते रहे। पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, हिसार में पशु–चिकित्सा विज्ञान संकाय के अधिष्ठाता बन जाने के बावजूद डा. सिंह साइकिल का उपयोग करते थे जबकि अन्य महाविद्यालयों के अधिष्ठाता यहाँ तक कि आचार्य स्कूटर अथवा कार का उपयोग करते थे। इससे पशु–चिकित्सा महाविद्यालय के छात्र कुछ आहत होते थे, जिसे उन्होंने एक सांस्कृतिक कार्यक्रम में किसी नाटक में प्रस्तुत किया। छात्रों की प्रस्तुति में कहा गया –"दुनिया में कार के एक से एक अच्छे माडल हैं। हमने 'डीन' साहब को दिखाया किन्तु उन्हें कोई माडल पसंद ही नहीं आता है – वे तो अपनी पुरानी साइकिल को छोड़ते ही नहीं हैं।"

इस प्रकार के सांस्कृतिक कार्यक्रमों में पशु–चिकित्सा महाविद्यालय के छात्र बहुत अच्छी वेश-भूषा, टाई-कोट व चमचमाते जूतों में आते थे। वे अपने मेहमानों की खूब गरमजोशी से आवभगत करते थे। इससे तत्कालीन

उपकुलपति श्री थापर भी प्रभावित थे। किंतु ऐसे समारोहों के अवसर पर भी डा. सिंह अपने सादे वस्त्रों में आते थे।

सबसे अच्छी शोध

प्रो. सिंह अपनी सबसे अच्छी शोध भैंस के फेफड़े में लिम्फोसारकोमा को मानते हैं। इसकी अमेरिका की पशु कैंसर प्रयोगशाला ने पुष्टि की। इस शोध कार्य को उनके छात्र डा. बलबंत सिंह कर रहे थे। उन्होने प्रो. सिंह को एक भैंस के फेफड़े की स्लाइड दिखायी, जिसमें लिम्फोसारकोमा की वृहदाकार क्षति थी। प्रो. सिंह ने फेफड़े के नमूने को देखा तथा उसमें स्थूल (ग्रास) क्षति पहचाना। डा. सिंह ने पुष्टि के लिये स्लाइड अमेरिका भेजी तथा संपुष्टि की परीक्षा रिपोर्ट पाकर वे तथा उनके छात्र प्रसन्न हो उठे। डा. बलबंत सिंह पूर्व –प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, पैथोलोजी विभाग तथा डीन, वेट्रनरी कालेज, पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, लुधियाना ने अपनी पी–एच. डी. की शोध समस्या को परिवर्तित कर यह कार्य भैंस पर करने का निर्णय लिया। अमेरिकी प्रोफ़ेसर ने प्रो. सिंह को यह कार्य प्रकाशित करने को कहा। इस पर उन्होंने उक्त प्रोफेसर को इस कार्य को इटली की ल्यूकीमिया कांफ्रेस में प्रस्तुति हेतु स्वीकृति की बात लिखी। प्रो. सिंह के अनुसार यह भैंस में इस रोग की प्रथम रिपोर्ट थी। ऐसी एक रिपोर्ट मनुष्य में भी प्रकाशित हुयी थी। अतः 'कम्परेटिव पैथोलोजी' की दृष्टि से इस कार्य का बहुत महत्व था। बाद में कुछ लोगों ने इस कार्य को विवादास्पद बना दिया था। प्रो. सिंह ने परियोजना की फाइनल रिपोर्ट की प्रतियां अनेक प्रयोगशालाओं को भेजीं। कालांतर में भैंस में लिम्फोसारकोमा एक पृथक विषाणुजन्य रोग सिद्ध हुआ।

अध्याय – पांच

भारतीय पशु–चिकित्सा अनुसंधान संस्थान, इज्जतनगर के निदेशक

18 जुलाई, 1966 को जब डा. सिंह ने भारतीय पशु–चिकित्सा अनुसंधान संस्थान, इज्जतनगर के निदेशक का पद ग्रहण किया तब यह संस्थान कृषि मंत्रालय, भारत सरकार के नियंत्रण में था। उनसे पूर्व डा. एम. आर. ढांडा कार्यकारी–निदेशक थे। संस्थान के दो परिसर मुक्तेश्वर और इज्जतनगर तथा 6 प्रभाग थे। संस्थान उसी काल में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली के अंतर्गत आया तथा तत्कालीन महानिदेशक एवं विख्यात कृषि वैज्ञानिक डा. बी. पी. पाल ने संस्थान का दौरा एवं निरीक्षण किया। उन्होंने संस्थान की दशा देखकर इसके पुनर्निर्माण एवं विकास हेतु डा. सिंह का आह्वान किया तथा उन्हें हर प्रकार की सहायता देने का आश्वासन दिया। अपने 17 वर्ष के कार्यकाल में डा. सिंह ने संस्थान को विकसित करने में कोई कसर नहीं छोडी। उन्होंने इन उपलब्धियों को प्राप्त करने के लिये निजी सुख तक छोड़ा तथा इससे उनका परिवार भी प्रभावित होने से नहीं बच सका। 30 नवम्बर, 1982 में सेवानिवृत्ति के समय तक डा. सिंह ने इस संस्थान के चार परिसरों (इज्जतनगर, मुक्तेश्वर, बैंगलोर तथा भोपाल), छह क्षेत्रीय केन्द्रों (श्रीनगर, पालमपुर, कलकत्ता, मखदूम तथा पोर्टब्लेयर) को राष्ट्रीय महत्व के संस्थान में परिवर्तित कर दिया। संस्थान के पक्षी प्रभाग, मखदूम तथा पोर्टब्लेयर केन्द्र क्रमशः केन्द्रीय पक्षी अनुसंधान संस्थान, केन्द्रीय बकरी अनुसंधान संस्थान एवं केन्द्रीय कृषि अनुसंधान संस्थान में विकसित हुये।

डा. चिंतामणि सिंह के भारतीय पशु–चिकित्सा अनुसंधान संस्थान, इज्जतनगर/ मुक्तेश्वर, उ.प्र. के निदेशक पद पर नियुक्ति के समय कठिन चुनौतियों और कार्यों का उल्लेख करते हुये द इंडियन वेट्रनरी जर्नल ने सन् 1966 के अगस्त अंक में लिखा कि भारतीय पशु–चिकित्सा अनुसंधान

संस्थान में अनेक तरह के वैज्ञानिक हैं, जिनमें कुछ असम्बन्धित व्यवसायों से भी आते हैं। अतः संस्थान का प्रबन्धन सरल नहीं है। संस्थान चलाने के लिये असाधारण योग्यता की आवश्यकता है ताकि निहित स्वार्थ वाले लोग संस्थान को अवनति की ओर न ले जा सकें। यह तभी सम्भव होगा जब निदेशक को सभी वैज्ञानिकों और अन्य लोगों का पूर्ण सहयोग प्राप्त हो। इन सभी बातों के अलावा निदेशक को नियमित प्रशासनिक कार्य करने के अतिरिक्त नियमित शोध कार्यकर्ता होना चाहिये। विख्यात शोध संस्थान का मोटो या ध्येय "स्वयं से पूर्व विज्ञान" होना चाहिये। यह मात्र नारा नहीं बल्कि समस्त कार्यों का निर्देशक सिद्धान्त होना चाहिए। सम्पादक ने पुनः लिखा कि "डा. सिंह की इस तरह की प्रेरणा से संस्थान का प्रत्येक कार्यकर्ता पूर्ण समर्पण की भावना से कार्य कर सकेगा।"

मातृ-परिसर मुक्तेश्वर

डा. सिंह को संस्थान के मातृ–परिसर मुक्तेश्वर से अन्य कारणों के अतिरिक्त भावनात्मक लगाव है। विषाणु विज्ञान में रुचि तथा पश्मीना बकरी पर शोध के अतिरिक्त मुक्तेश्वर के 'महाराज जी' उनके आकर्षण के सदैव केन्द्र रहे हैं। इसलिये अपने कार्यकाल के दौरान तथा बाद में भी वे मुक्तेश्वर जाने का कोई अवसर नहीं छोड़ते थे। डा. सिंह ने अपने कार्यकाल में संस्थान के मातृ–परिसर को सदैव सुदृढ़ किया तथा इसे विशेष दर्जा प्रदान किया। मुक्तेश्वर से पधारने वाले मुख्यालय प्रभारी, विभागाध्यक्ष, वैज्ञानिकों व अधिकारियों को उनसे मिलने की छूट थी। वे परिसर में वैज्ञानिकों को पदस्थ तो करते थे किंतु मुक्तेश्वर से अन्यत्र स्थानांतरण पर नकारात्मक रूख रखते थे। इसके लिये वे संस्थान व बाहर की संस्तुतियों/दबावों को अस्वीकृत कर देते थे। हां सेवानिवृत्ति से पूर्व उन्होंने लम्बे समय से कार्यरत वैज्ञानिकों की पारिवारिक समस्याओं (स्वास्थ्य/बच्चों की उच्च शिक्षा) के कारण कई वैज्ञानिकों का स्थानांतरण अन्य परिसरों में किया।

डा. सिंह के कार्यकाल में मुक्तेश्वर में विषाणु रोगों यथा रिंडरपेस्ट, खुरपका और मुंहपका, भेड़–बकरी चेचक आदि के निदान परीक्षणों व टीका विकास पर उत्कृष्ट कार्य हुये। यहां की आधुनिकतम सुविधाओं से परिपूर्ण

प्रयोगशालायें छात्रों, देशी–विदेशी वैज्ञानिकों व विशेषज्ञों के आकर्षण का केन्द्र रहीं। इस परिसर में अनेक शैक्षणिक कार्यक्रम राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय गोष्ठियां आयोजित हुयीं। पश्मीना बकरी फार्म की स्थापना डा. सिंह की विशेष रुचि, प्रयास एवं परिश्रम का परिणाम था। डा. सिंह गर्व से कहते हैं– भारतीय पश्म दुनिया की उत्कृष्ट तंतु है। मुक्तेश्वर में पश्मीना बकरी का अनुकूलन हुआ तथा बाद में इसके स्वास्थ्य एवं उत्पादन के पहलुओं पर विस्तृत अध्ययन हुये। विरल आनुवंशिक पदार्थ का संरक्षण एवं प्रदर्शन डा. सिंह की दूरदृष्टि के कारण ही संभव हो सका है। इस परिसर में कार्यरत अनेक वैज्ञानिकों डा. एन. एस. दत्त, डा. जी. एल. शर्मा, डा. बी. यू. राव, डा. एस. कुमार, डा. पी. के. उप्पल, डा. एम. सी. पांडे, डा. बी. बी. मलिक, डा. आर. पी. बंसल, डा. बी. एस. नेगी, डा. जी. एल. कौल आदि ने डा. सिंह के स्वपन्न को पूर्ण करने में अथक योगदान दिया तथा परिसर का निर्माण किया। अन्य बातों के अतिरिक्त मुक्तेश्वर परिसर में केन्द्रीय विद्यालय की स्थापना डा. सिंह के कार्यकाल की प्रमुख उपलब्धि थी। इस कार्य के लिये डा. सिंह ने अपना पूर्ण समर्थन दिया ताकि परिसर के बच्चों के शिक्षा की समस्या का समाधान हो सके।

इज्जतनगर का मुख्य परिसर

इम्पीरियल बैक्टीरियोलोजिस्ट ले. कर्नल जे. डी. ई. होम्स की संस्तुति के आधार पर सन् 1913 में भारत सरकार ने इम्पीरियल बैक्टीरियोलोजी लैबोरेटरी, मुक्तेश्वर के उपकेन्द्र के स्थापनार्थ इज्जतनगर, बरेली में 700 एकड़ भूमि क्रय की। यहाँ जैव उत्पाद संस्थान (अब प्रभाग), पशु पोषण अनुसंधान, कुक्कुट अनुसंधान भवन (यहाँ अब जीव–रसायन प्रभाग स्थित है), प्रजीवी विज्ञान विभाग के भवन निर्मित हुये तथा इनसे सम्बद्ध विभागों ने कार्य करना प्रारंभ किया। सन् 1933 में पशु पोषण तथा कुक्कुट अनुसंधान भवन की आधारशिला/उद्घाटन भारत के तत्कालीन वायसराय लार्ड लिनलिथगो ने किया। बाद में यहाँ पशु आनुवंशिकी प्रभाग तथा स्नातकोत्तर शिक्षा हेतु स्नातकोत्तर (पी.जी.) कालेज भवन (अब शारीरिकी एवं जलवायुकी तथा राष्ट्रीय जैव प्रौद्योगिकी केन्द्र) बना। इज्जतनगर परिसर में प्रशासनिक भवन, पुस्तकालय (अब प्रसार शिक्षा विभाग), मानव चिकित्सालय, डेयरी, कृषि फार्म अनुभाग तथा प्रयोगात्मक पशु

गृह शैडस निर्मित हुये। यहाँ मात्र एक स्नातकोत्तर छात्रावास तथा अतिथि गृह (डाक बंगला) था। कृषि फार्म अनुभाग में चारा उगाया जाता था। संस्थान चारों ओर से कंटीले तार द्वारा घिरा था तथा चहारदीवारी भी नहीं थी। आवासीय भवन के नाम पर अधिकारियों हेतु 8–10 बंगले तथा कर्मचारियों हेतु 'बाबू लाइन' थी। प्रशासनिक भवन से लगा निदेशक आवास था। इज्जतनगर क्षेत्र विकसित नहीं था। संस्थान के आस–पास बाजार तथा अन्य सुविधाओं का अभाव था। यहाँ इज्जतनगर डाकघर, सैनिक हवाई अड्डा तथा पूर्वोत्तर रेलवे चिकित्सालय, वर्कशाप, रेलवे स्टेशन, किशोर सदन तथा केन्द्रीय कारागार था। आस-पास चोर-उचक्के सक्रिय रहते थे।

डा. सिंह के कार्यकाल में संस्थान की प्रगति का अनुमान सन् 1968 से पूर्व तथा पश्चात् स्थापित प्रभागों से लगाया जा सकता है।

सन् 1968 पूर्व के प्रभाग

1 जीवाणु और विकृति विज्ञान

2 जैव उत्पाद

3 पशु पोषण

4 परजीवी विज्ञान

5 पशु आनुवांशिकी एवं प्रजनन

6 कुक्कुट अनुसंधान

सन् 1968 के पश्चात् स्थापित प्रभाग

1969 : पशु प्रसार शिक्षा

1969 : मानकीकरण

1970 : शरीर क्रिया विज्ञान एवं भैषज्य विज्ञान

1971 : जानपदिक–रोग विज्ञान

1971 : पशु–चिकित्सा जनस्वास्थ्य

1971 : जैव रसायन

1974 : शरीर क्रिया विज्ञान एवं जलवायुकी

1975 : भैषज्य एवं विष विज्ञान

1975 : विषाणु विज्ञान

1975 : जीवाणु एवं कवक विज्ञान

1975 : पक्षी रोग

1975 : प्रयोगात्मक शल्य चिकित्सा एवं भैषज्य विज्ञान

1975 : पशुधन उत्पादन प्रौद्योगिकी

1975 : पशु पुनरुत्पादन

1975 : पशुधन अर्थशास्त्र एवं सांख्यिकी

1977 : प्रयोगशाला पशु अनुसंधान

1982 : प्रतिरक्षा अनुभाग

विशेष पशुधन अनुसंधान परियोजनायें

1968 : पशुधन उत्पादन शोध (गाय और भैंस)

1970 : अखिल–भारतीय समन्वित शोध परियोजना (गाय)

1970 : अखिल–भारतीय समन्वित शोध परियोजना (शूकर)

1979 : पशुधन उत्पादन शोध (गाय, बकरी एवं प्रयोगशाला पशु), मुक्तेश्वर

भारतीय पशु-चिकित्सा अनुसंधान संस्थान, इज्जतनगर के निदेशक के रूप में डा. सिंह की विदेश यात्रायें

★ 10–24 नवम्बर, 1968 कामन वेल्थ वैज्ञानिक समिति की करांची, पाकिस्तान में आयोजित बैठक में भाग लिया। आपने पेशावर, रावलपिंडी, लाहौर तथा ढाका स्थित प्रयोगशालाओं एवं संस्थानों का भ्रमण किया और काठमांडू होते हुये स्वदेश वापस आये।

★ मई, 1971 में भारत सरकार के प्रतिनिधि के रूप में पेरिस (फ्रांस) में 39 वें ओ.आई.ई. सम्मेलन में सम्मिलित हुये।

★ 18 अप्रैल–14 मई, 1974 भारतीय वैज्ञानिकों के विशेषज्ञ दल के सदस्य के रूप में आपको विदेश मंत्रालय तथा कृषि मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा जांजीबार, तंजानिया भेजा गया।

★ आप 2–21 मई, 1979 के दौरान वेट्रनरी इपीडेमियोलोजी तथा इसके अर्थशास्त्र एवं आस्ट्रेलियाई पशु–चिकित्सक संघ के सम्मेलन में सम्मिलित हुये।

★ सितम्बर, 1971 में भारत सरकार के प्रतिनिधि के रूप में पडोवा, इटली में कम्परेटिव ल्यूकीमिया रिसर्च पर पांचवें अंतर्राष्ट्रीय सिम्पोसियम में भाग लिया।

डा. सिंह के कार्यकाल में इज्जतनगर में राष्ट्रपति वी.वी. गिरि द्वारा माडूलर प्रयोगशाला भवन का शिलान्यास

सन् 1972 देश की स्वतंत्रता का पच्चीसवां (रजत जयंती) वर्ष था। उसका संस्थान के इतिहास में अत्यधिक महत्व सिद्ध हुआ। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली के महानिदेशक डा. एम.एस. स्वामीनाथन के सक्रिय समर्थन तथा डा. चिन्तामणि सिंह के अथक प्रयासों के फलस्वरूप भारत के राष्ट्रपति महामहिम श्री वी.वी. गिरि माडूलर प्रयोगशाला भवन का शिलान्यास करने 19 मार्च, 1972 को भारतीय पशु–चिकित्सा अनुसंधान संस्थान, इज्जतनगर पधारे। हजारों दर्शकों की उपस्थिति में श्री गिरि ने भवन की आधारशिला रखी। इस ऐतिहासिक अवसर पर भारत के तत्कालीन कृषि मंत्री श्री फखरुद्दीन अली अहमद, उत्तर प्रदेश के राज्यपाल डा. बी. गोपाला रेड्डी, कृषि राज्य मंत्री प्रो. शेर सिंह, गृह राज्य मंत्री श्री कृष्ण चंद्र पन्त, बरेली वासी उत्तर प्रदेश के स्वास्थ्य मंत्री श्री धर्म दत्त वैद्य, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के उप महानिदेशक (पशु विज्ञान) डा. बी.के. सोनी, अनेक स्थानीय महत्वपूर्ण व्यक्ति, सेना तथा नागरिक उच्च अधिकारी उपस्थित थे। इस ऐतिहासिक अवसर पर एक प्रदर्शनी भी आयोजित की गयी, जिसमें

संस्थान की महत्वपूर्ण गतिविधियां दर्शायी गयीं थीं। इसमें पशुओं में संकर प्रजनन उल्लेखनीय था।

बैंगलोर परिसर

डा. सिंह के प्रयासों से सन् 1972 में संयुक्त–निदेशक के प्रभार में भारतीय पशु-चिकित्सा अनुसंधान संस्थान, बैंगलोर का क्षेत्रीय केन्द्र स्थापित किया गया, जिसमें खुरपका और मुंहपका रोग पर शोध प्रारम्भ हुयी। डेनमार्क सरकार की डैनिश अंतर्राष्ट्रीय विकास एजेंसी (डैनिडा) की सहायता से खुरपका एवं मुंहपका रोग अनुसंधान एवं वृहद मात्रा में फर्मेन्टर विधि द्वारा टीका उत्पादन प्रारंभ किया गया। इस परिसर की स्थापना के लिये कर्नाटक सरकार से हैब्बल नामक स्थान पर 7 एकड़ भूमि एवं कुछ भवन, याहलंका में 112 एकड़ भूमि प्राप्त हुयी। याहलंका हैब्बल से 15 किलोमीटर दूर है। बैंगलोर में स्थापित खुरपका और मुंहपका विषाणु टीका उत्पादन प्रयोगशाला जैव–सुरक्षा की दृष्टि से पी 3 स्टार की है। ये सभी कार्य तत्कालीन विख्यात विषाणु विज्ञानी डा. नीलाकंठन एवं सहयोगियों के नेतृत्व में सम्पन्न हुये। डा. सिंह ने इस परिसर की स्थापना, विकास तथा वैज्ञानिक गतिविधियों में सदैव पर्याप्त रुचि ली।

सन् 1979 से जटिल फर्मेन्टेशन तकनीक को प्रयुक्त करते हुये प्रतिवर्ष 30–40 लाख पॉलीवेलेंट खुरपका और मुंहपका टीके का उत्पादन शुरु हुआ। इस टीके को बी एच के–21 सस्पेंशन कोशिकाओं में ए, ओ, सी तथा एशिया–1 विषाणु संवर्धित करके बनाया गया। टीका उत्पादन की शोध एवं विकास (आर. एंड डी.) इकाई ने स्थानीय जैव पदार्थो के सस्ते माध्यम तथा वृद्धि पदार्थो के विकल्प खोज कर इस टीके को सस्ता बनाया। विषाणु की सान्द्रता बढ़ा कर टीके की मात्रा भी घटायी गयी।

डा. सिंह बैंगलोर परिसर तथा इसकी उपलब्धियों के प्रशंसक हैं।

पालमपुर केन्द्र

संस्थान का क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, पालमपुर उत्तर–पश्चिमी हिमालय क्षेत्र की पशुपालन से सम्बंधित पशुपोषण की समस्याओं को सुलझाने के उद्देश्य से सन् 1959 को स्थापित किया गया था। इस क्षेत्रीय प्रयोगशाला

को स्थापित करने में डा. सिंह को डा. एस. एस. नेंगी तथा डा. आर.एन. पाल ने बहुत सहायता की थी। डा.सिंह के कार्यकाल में डा. एस. एस.नेगी के नेतृत्व में युवा जैव रसायनविदों एवं पशु पोषण वैज्ञानिकों (डा. ओ. पी.शर्मा, डा.आर. के.डावरा, डा.बी.सिंह आदि) ने अपने अनुसंधान की छाप छोड़ी तथा सभी को प्रभावित किया। यहां विभिन्न चारा वृक्षों की संपूर्ण पोषणीय विवेचना की गयी तथा इसके प्रयुक्तकर्ताओं को जानकारी प्रदान की गयीं। बांज, लंताना, ब्रेकन जैसे पादपों/फर्न विषाक्तता पर खोजें हुयी। बांज से टेनिन विषाक्तता तथा लंताना से यकृत विषाक्तता/ प्रकाश संवेदनशीलता पर अनेक मौलिक शोध पत्र प्रकाशित हुये। लंताना के दो यकृतीय विष लैंटाडीन 'सी' और 'डी' का पूर्ण चरित्रण किया गया।

कलकत्ता केन्द्र

आप के प्रयासों के परिणामस्वरुप ही सन् 1970 में कलकत्ता में अखिल–भारतीय स्वच्छता विज्ञान एवं जनस्वास्थ्य संस्थान में पशु–चिकित्सा जनस्वास्थ्य इकाई की स्थापना हुयी। यहाँ प्रो. पी. एन. खन्ना के नेतृत्व में इन विषयों पर शोध एवं शिक्षा की आधारशिला रखी गयी। यहाँ दो वर्षीय स्नातकोत्तर शिक्षा कार्यक्रम प्रारंभ किया गया, जिसके अंतर्गत कलकत्ता विश्वविद्यालय द्वारा एम वी पी एच (Master in Veterinary Public Health) की स्नातकोत्तर उपाधि प्रदान की जाती थी। यह कार्यक्रम विश्व स्वास्थ्य संगठन, भारतीय पशु–चिकित्सा अनुसंधान संस्थान तथा अखिल–भारतीय स्वच्छता विज्ञान एवं जनस्वास्थ्य संस्थान द्वारा संयुक्त रुप से नियोजित, आयोजित एवं प्रारंभ किया गया। डा. सिंह ने अपने निदेशक काल में अखिल भारतीय स्वच्छता विज्ञान एवं जनस्वास्थ्य संस्थान के एम.डी. (पी.एस.एम), ए.डी., पी–एच.डी., एम.सी.डब्लू, डी.एच.ई. तथा डी.आई.एच. कार्यक्रमों में पशु–चिकित्सा जनस्वास्थ्य विषय के वैज्ञानिकों का योगदान प्रदान करवाया। अनेक आयुर्विज्ञान स्नातकों को जूनोटिक (पशुजन्य रोग) रोगों का ज्ञान प्रदान किया गया।

श्रीनगर केन्द्र

संस्थान के क्षेत्रीय शोध केन्द्र श्रीनगर की सन् 1973 में राष्ट्रीय कृषि आयोग की संस्तुति के अनुसार भेड़ों में *डिक्टिओकालस फाइलेरिया*

नामक परजीवी द्वारा 'परजीवी श्वसनीशोथ' के नियंत्रण हेतु हुयी। उत्तरी–पश्चिमी हिमालय क्षेत्र में 6 सप्ताह की आयु के मेमनों में इस टीके के लगाने की नियमित और स्वीकृत परम्परा बन गयी थी तथा लगभग 50 लाख भेड़ों का टीकाकरण किया गया था। इस प्रयोगशाला को स्थापित करने में परजीवी वैज्ञानिक डा. टी. एन. धर एवं सहयोगियों ने अथक प्रयास किया। *डि. फाइलेरिया* नामक टीका इस परजीवी का संक्रामक लार्वो को (इरेडियेटेड) व विकिरणित (एटुनियेट) करके बनाया गया तथा इसके 1000 ततुकृत लार्वो को 3–4 सप्ताह के अंतराल पर दो मात्राओं में दिया गया। इससे परजीवी श्वसनी शोथ के प्रति उच्चस्तरीय प्रतिरक्षा उत्पन्न होती है तथा रोग से प्रभावकारी ढंग से बचाव होता है। शांतिपूर्ण तथा विकार के कार्यो में परमाणु ऊर्जा उपयोग का यह एक अच्छा उदाहरण था।

भारत द्वारा पोखरन, राजस्थान में किये गये परमाणु विस्फोटों का डा. चिंतामणि सिंह प्रबल समर्थन एवं प्रशंसा करते हैं। उनका मानना है कि इससे पश्चिमी देशों को हमने दृढ़तापूर्वक बता दिया है कि हम जो चाहते है, वह करेंगे तथा हमें किसी की परवाह नहीं हैं। जब डा. सिंह भारतीय पशु–चिकित्सा अनुसंधान संस्थान, इज्जतनगर के निदेशक थे, तब शांतिपूर्ण कार्यो में नाभिकीय ऊर्जा के उपयोग पर संस्थान के श्रीनगर, जम्मू एवं कश्मीर केन्द्र में विकिरणित फेफड़ा कृमि टीका (इरेडियेटेड लंगवर्म वैक्सीन) परियोजना के अन्तर्गत विशेष कार्य हुआ था। इस तकनीक से विकसित टीके, सफल क्षेत्रीय परीक्षण पश्चात् कृषकों को सुलभ हुये। यह टीका अत्यंत प्रभावकारी पाया गया। जिन मेमनों को यह टीका लगाया गया था, उन्हें फेफड़ा कृमि रोग नहीं हुआ। उनका शरीर भार अधिक था एवं वे अधिक ऊन व मांस देने वाली भेड़ें सिद्ध हुयीं। इस सम्बन्ध में डा. सिंह ने एक वृतांत सुनाया कि एक बार किसी सार्वजनिक कार्यक्रम में कृषकों ने भेड़ों के झुण्ड को खड़ा कर सड़क मार्ग अवरुद्ध किया तथा इस टीके के लगाने की मांग की।

इस परियोजना को लाने तथा संयंत्रों की व्यवस्था करवाने में निदेशक डा. सिंह को बहुत परिश्रम करना पड़ा। उनके परमाणु ऊर्जा आयोग तथा भाभा परमाणु अनुसंधान संस्थान, बम्बई के वैज्ञानिकों से निकट के सम्बंध स्थापित हो गये थे। डा. सिंह का कहना है कि आज जिन वैज्ञानिकों ने पोखरन में परमाणु विस्फोट में भाग लिया है, उनमें से कई से उनका निकट

का सम्बंध था। डा. सिंह को इस बात का गर्व है कि श्रीनगर में हुये इस कार्य की पूर्व प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने तारीफ की थी। वे इस परियोजना से जुड़े वैज्ञानिकों डा. धर एवं डा. आर. एल. शर्मा की भी बड़ाई करते हैं।

केन्द्रीय बकरी अनुसंधान संस्थान, मखदूम, मथुरा

डा. सिंह के निदेशक काल में सन् 1975 में भारतीय पशु-चिकित्सा अनुसंधान संस्थान, इज्जतनगर ने पशुपालन विभाग, उत्तर प्रदेश से फरह मखदूम, मथुरा में अधिग्रहित भूमि पर अपना क्षेत्रीय भेड़ और बकरी शोध केन्द्र स्थापित किया। सन् 1976 में डा. सिंह ने इसका राष्ट्रीय नाम बकरी शोध केन्द्र रखा। तीन वर्ष पश्चात् यानिकि 1979 ने छठवीं पंचवर्षीय योजना काल में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली ने केन्द्रीय बकरी अनुसंधान संस्थान (सी आई आर जी) नाम से पूर्ण संस्थान स्थापित किया। इस शोध केन्द्र / संस्थान की स्थापना के प्रारंभिक वर्षो में डा. सिंह को अथक प्रयास करना पड़ा। उपर्युक्त वर्षो में डा. के. एल. साहनी के नेतृत्व में कई वैज्ञानिकों ने शिविरों में रह कर, अपार कष्ट उठाकर शोध केन्द्र की प्रयोगशालाओं तथा शैडों का निर्माण करवाया। डा. सिंह उन वैज्ञानिकों के कार्यो एवं कठिनाइयों का प्रायः स्मरण करते हैं तथा उनकी भूरि-भूरि प्रशंसा करते हैं। संस्थान के प्रथम निदेशक डा. पुष्कर नाथ भट्ट ने इसका प्रारंभिक विकास किया।

केन्द्रीय पक्षी अनुसंधान संस्थान, इज्जतनगर

केन्द्रीय पक्षी शोध संस्थान (संक्षिप्त नाम 'कैरी' या CARI) की स्थापना, 2 नवम्बर 1979 को इज्जतनगर में हुयी। इससे पूर्व यह भारतीय पशु-चिकित्सा अनुसंधान संस्थान, इज्जतनगर का कुक्कुट अनुसंधान प्रभाग था। इस प्रभाग के विकास पर डा. सिंह ने समुचित ध्यान दिया था, तभी तो उनके तथा तत्कालीन विभागाध्यक्ष, डा. बी. पाण्डा के सम्मिलित प्रयासों से केन्द्रीय पक्षी शोध संस्थान की स्थापना संभव हुयी। डा. पाण्डा इस संस्थान के संस्थापक निदेशक बने।

जब 'कारी' कुक्कुट अनुसंधान प्रभाग था, उस समय डा. सिंह ने इसके 'इंफ्रास्ट्रक्चर' (मूलभूत संरचना) को सुदृढ़ करने पर विशेष ध्यान दिया। इसके फलस्वरुप 260-270 अण्डा देने वाली व्यवसायिक मुर्गी (आई एल

आई-80) उपभोक्ताओं को सुलभ हुयी। इन मुर्गियों में 1.90 कि.ग्रा. आहार को एक दर्जन अण्डों में परिवर्तित करने की क्षमता थी। इसी प्रकार से बी-77 नामक मांस देने वाले 'ब्रोइलर' मुर्गे का विकास हुआ। ये मुर्गे 8 सप्ताहों में 1.8 कि.ग्रा. शरीर भार प्राप्त कर लेते थे तथा इनसे अधिक मांस मिलता था। सर्वप्रथम 1974 में इज्जतनगर में संस्थान के कुक्कुट प्रभाग में संयुक्त राष्ट्र विकास परियोजना/ भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद की सहयोगी शिक्षा परियोजना के अन्तर्गत भारत में जापानी बटेरें (*कोटरनिक्स कोटरनिक्स जैपोनिका*) आयातित की गयीं। इनके भ्रूण युक्त अण्डे, शिक्षा विज्ञान विभाग, कैलीफोर्निया विश्वविद्यालय, डेवीस (अमेरिका) से सन् 1974 और पुनः 1976 में प्राप्त किये गये। हैचिंग वाले अण्डे पुनः संयुक्त राष्ट्र विकास परियोजना के अंतर्गत दो और बटेर पंक्तियों से होहेनहोम विश्वविद्यालय, स्टुटगार्ट (पश्चिमी जर्मनी) से प्राप्त किये गये। उस काल में जापानी बटेरों, इसके कंचे जैसे छोटे-छोटे 5 ग्राम भार के अंडों तथा अंडों के आचार की धूम थी। इस नवीन विषय के अनुसंधान में उत्साह था। कालान्तर में केन्द्रीय पक्षी अनुसंधान संस्थान, इज्जतनगर में बटेर पर अग्रिम शोध केन्द्र की स्थापना हुयी, जिसमें बटेरों से सम्बंधित विविध विषयों में शोध की जाती है।

संस्थान के इतिहास में डा. सिंह के कार्यों का उल्लेख

दिसम्बर 1989-1990 में सेन्टेनरीं सेलीब्रेशंस, कोमेमोरेटिव वाल्यूम, पृष्ठ 50-51, पर डा. सिंह के कार्यो का इन शब्दों में उल्लेख किया गया है-

सन् 1966 में डा. सी. एम. सिंह ने निदेशक पद पर योगदान दिया। वह भारतीय पशु-चिकित्सा अनुसंधान संस्थान के सबसे युवा निदेशक थे। अपने आगामी 16 वर्षो के महत्वपूर्ण कार्यकाल में अनेक नये विषयों को सृजित करके, पशु-चिकित्सा विज्ञान की शिक्षा और शोध की गहराई में पहुँचकर, विविधीकरण द्वारा इसके अवसर (स्कोप) को बढ़ाया। भारतीय पशु चिकित्सा अनुसंधान संस्थान अपने क्षेत्र का एक अनोखा संस्थान बन गया क्योंकि इसकी एक ही छत के नीचे पशुधन स्वास्थ्य, उत्पादन तथा प्रौद्योगिकी लाये गये थे।

उनके गतिशील नेतृत्व के अंतर्गत विशेषकर चौथी और पांचवी पंचवर्षीय योजना काल में संस्थान में 15 नये तथा पुनर्गठित प्रभागों, बैंगलोर में एक परिसर तथा पालमपुर, कलकत्ता और श्रीनगर में क्षेत्रीय स्टेशन जोड़कर पर्याप्त मूलभूत सुविधायें विकसित हुयीं। उच्च शोध मानकों और उपलब्धियों को देखते हुये भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद ने भारतीय पशु–चिकित्सा अनुसंधान संस्थान को राष्ट्रीय संस्थान की मान्यता प्रदान की। जब सन् 1982 में डा. सिंह ने सेवानिवृत्त होने पर कार्यालय छोड़ा तो भारतीय पशु चिकित्सा अनुसंधान संस्थान 'विश्वविद्यालय समतुल्य (Deemed to be University) घोषित हुआ। इससे उनके (डा. सिंह) के पशु–चिकित्सा अनुसंधान और शिक्षा को अग्रिम सीमाओं तक बढ़ाने की दूरदृष्टिता, गतिशीलता का दैदीप्यमान प्रमाण मिला।

अध्याय – छः

पशु–चिकित्सा जन स्वास्थ्य

प्रो. सिंह ने प्रारंभ में जीवाणु, कवक, माइकोप्लाज्मा तथा विषाणु विज्ञान पर शोध किया/करवाया। बाद के वर्षों में वे विकृति विज्ञान में छात्रों के शोध–प्रबंध के मार्गदर्शक रहे। उनका पशु–चिकित्सा सार्वजनिक स्वास्थ्य विषय में विशेष रुचि रही। डा. सिंह की पशु–चिकित्सा जन स्वास्थ्य विषय में छात्र जीवन से उस समय से रुचि, जब वे मिशीगन विश्वविद्यालय, अमेरिका में पी–एच.डी. के छात्र थे। पी–एच.डी. में उन्होंने *लिस्टीरिया मोनोसाइटोजेनिस* जीवाणु पर शोध–प्रबन्ध प्रस्तुत किया था। उसकी पृष्ठभूमि अत्यंत रोचक है।

डा. सिंह के कार्य से प्रभावित होकर लिस्टर संस्थान, ने उन्हें 'फेलोशिप' का प्रस्ताव किया था। ऐसा निमंत्रण प्रायः मानव चिकित्सकों को ही दिया जाता है।

जब डा. सिंह पशु–चिकित्सा महाविद्यालय, मथुरा में जीवाणु और विकृति विज्ञान के आचार्य थे, तो उन्होंने जन स्वास्थ्य की दृष्टि से कई नये और महत्वपूर्ण साल्मोनेला सीरमी प्रकार खोजे थे, जिन्हें *सा. वृन्दावन, सा. गोकुल, सा. मथुरा, सा. ब्रजभूमि* आदि नाम दिया। ये जीवाणु मानव, पशुवाहकों तथा अवमल जल से भी पृथक्कीकृत किये गये थे।

डा. सिंह ने इसके अतिरिक्त इ. *कोलाई* तथा फाज टाइपिंग पर भी शोध कार्य किया। उनके अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान, नई दिल्ली के कर्नल कालरा तथा सैन्य बल चिकित्सा महाविद्यालय, पूना के मेजर गांगुली जैसे देश के वरिष्ठ सूक्ष्म जीवाणु विज्ञानियों से निकट के सम्बंध थे। ये दो महानुभाव मानव सूक्ष्म जीवाणुओं के नमूने डा. सिंह के पास भेजा करते थे तथा जन स्वास्थ्य समस्याओं पर चर्चा भी करते थे।

जीवाणु एवं कवक विज्ञान प्रभाग, भारतीय पशु–चिकित्सा अनुसंधान संस्थान, इज्जतनगर में डा. सिंह के प्रयासों से राष्ट्रीय साल्मोनेला संदर्भ केन्द्र (पशु–चिकित्सा विज्ञान) की सन् 1976 में स्थापना हुयी। इस केन्द्र में

सालमोनेला सीरम टंकण (सीरोटाईपिंग) की जाती है। इस केन्द्र में मानव स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाले पशु जन्य (जूनोटिक) महत्व के कई सालमोनेला की नई प्रजातियां खोजी गयी। ये महत्वपूर्ण कार्य तत्कालीन प्रभारी प्रयोगशाला तथा जीवाणु विज्ञानी डा. बी. आर. गुप्ता के नेतृत्व में सम्पन्न हुये थे।

आपके प्रयासों के परिणामस्वरुप ही सन् 1970 में कलकत्ता में अखिल भारतीय स्वच्छता विज्ञान एवं जन स्वास्थ्य संस्थान में पशु–चिकित्सा जन स्वास्थ्य इकाई की स्थापना हुयी। यहाँ प्रो. पी. एन. खन्ना के नेतृत्व में इन विषयों पर शोध एवं शिक्षा की आधारशिला रखी गयी। यहाँ दो वर्षीय स्नातकोत्तर शिक्षा कार्यक्रम प्रारंभ किया गया, जिसके अंतर्गत कलकत्ता विश्वविद्यालय द्वारा एम. वी. पी. एच. (Master in Veterinary Public Health) की स्नातकोत्तर उपाधि प्रदान की जाती थी। यह कार्यक्रम विश्व स्वास्थ्य संगठन, भारतीय पशु–चिकित्सा अनुसंधान संस्थान तथा अखिल भारतीय स्वच्छता विज्ञान एवं जन स्वास्थ्य संस्थान द्वारा संयुक्त रुप से नियोजित, आयोजित एवं प्रारंभ किया गया। डा. सिंह ने अपने निदेशक काल में अखिल भारतीय स्वच्छता विज्ञान एवं जन स्वास्थ्य संस्थान के एम.डी. (पी. एस.एम.) ए.डी., पी–एच.डी., एम.सी.डब्लू., डी.एच.ई. तथा डी.आई.एच. कार्यक्रमों में पशु–चिकित्सा जन स्वास्थ्य विषय के वैज्ञानिकों का योगदान प्रदान करवाया। अनेक आयुर्विज्ञान स्नातकों को पशुजन्य रोगों का ज्ञान प्रदान किया गया।

डा. सिंह के प्रयासों से भारतीय पशु–चिकित्सा अनुसंधान संस्थान में चौथी पंचवर्षीय योजना के अंतर्गत सन् 1971 में पशु–चिकित्सा जन स्वास्थ्य प्रभाग (Division of Veterinary Public Health) की स्थापना हुयी। इस प्रभाग में मूलतः पांच अनुभाग प्रस्तावित थे – (i) तुलनात्मक विकृति विज्ञान एवं जैव–औषध विज्ञान, (ii) जूनोसिस (विषाणु, जीवाणु, रिकेटशियाई एवं कवकीय), (iii) खाद्य जन्य संक्रमण एवं विषाक्तायें, (iv) जन स्वास्थ्य सेवायें एवं (v) वैज्ञानिक संयोजन एवं प्रशासन। यह प्रभाग शोध, स्नातकोत्तर शिक्षा एवं जन स्वास्थ्य सेवाओं में लगा हुआ था/है, जिसे विश्व स्वास्थ्य संगठन/कृषि एवं खाद्य संगठन ने मान्यता प्रदान की।

पशु–चिकित्सा जन स्वास्थ्य प्रभाग को विश्व स्वास्थ्य संगठन और कृषि एवं खाद्य संगठन के सहयोगी अनुसंधान एवं प्रशिक्षण नोडल केन्द्र की मान्यता प्राप्त थी। इस विभाग को संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम के अंतर्गत सूचना प्राप्त करने के लिये इंफोटेरा (INFOTERA) के स्रोत हेतु पंजीकृत किया गया था।

पशु–चिकित्सा जन स्वास्थ्य प्रभाग में ब्रूसेल्लता शोध पर जोर दिया गया। ब्रूसेल्लता निदान हेतु वैज्ञानिक परीक्षणों का मूल्यांकन, अंतः पात्र तथा बाह्य पात्र विधियों द्वारा नये–नये जीवाणुनाशकों की खोज तथा इसकी देश में स्थिति पर अध्ययन किये गये। इस कार्य में डा. वी. के. यादव प्रमुख शोधकर्ता वैज्ञानिक थे। डा. सिंह के निदेशक काल में इस प्रभाग में हाइडेटिडोसिस, खाद्य विषाक्तता के कारण *सीडोमोनास एरीजिनोसा*, ज्वर के अज्ञात कारण, हृदय वहनीय रोगों यथा धमनी काठिन्य (एथीरोस्केलरोसिस) आदि पर शोध किये गये। अंतिम रोग पर तत्कालीन विकृति विज्ञानी डा. एन. पी. भल्ला और डा. एम.सी. प्रसाद का योगदान उल्लेखनीय था। डा. सिंह के पशु–चिकित्सा जन स्वास्थ्य से जुड़े निम्न कार्य उल्लेखनीय रहे हैं।

विश्व स्वास्थ्य संगठन

विश्व स्वास्थ्य संगठन, नई दिल्ली के 22 मार्च, 1985 से 30 अप्रैल, 1985 तक भूटान के राष्ट्रीय रैबीज नियंत्रण कार्य के सलाहकार रहे। आप दस वर्षो से अधिक समय तक जिनेवा, स्विटजरलैण्ड के विश्व स्वास्थ्य संगठन के पशुजन्य रोगों के विशेषज्ञ सलाहकार दल के सदस्य रहे।

कृषि एवं खाद्य संगठन/ विश्व स्वास्थ्य संगठन

इन विश्व संगठनों द्वारा आप खाद्य–स्वच्छता विज्ञान एवं पशु–चिकित्सा जन स्वास्थ्य और पशु–चिकित्सा औषध विज्ञान, बर्लिन से सम्बंधित रहे। आपने बर्लिन में इसके प्रथम से तीसरे खाद्य जनित संक्रमण एवं विषाक्तता सत्रों में भाग ही नहीं लिया, अपितु इनकी अध्यक्षता भी की।

आपने भारतीय पशु–चिकित्सा अनुसंधान संस्थान में बर्लिन के सहयोग से एशिया और प्रशान्त महासागर के क्षेत्रों के पशु–चिकित्सा एवं जन स्वास्थ्य चिकित्सकों हेतु खाद्य स्वच्छता विज्ञान विषयों पर कार्यशाला आयोजित करवाई।

आपने जन स्वास्थ्य संघ हेतु खाद्य स्वच्छता विज्ञान विषय पर ओरेशन व्याख्यान दिया।

डा. सिंह जब भारतीय पशु–चिकित्सा अनुसंधान संस्थान के निदेशक थे तो पशु–चिकित्सा जन स्वास्थ्य विषय पर निम्नलिखित कार्यक्रम आयोजित हुये–

- पशु–चिकित्सा जन स्वास्थ्य के सिद्धान्त और व्यवहार पर प्रथम और द्वितीय त्रैमासिक (अप्रैल – जुलाई, 1977 तथा 1979) अल्पकालीन कार्यक्रम, पशु–चिकित्सा जन स्वास्थ्य प्रभाग, भारतीय पशु–चिकित्सा अनुसंधान संस्थान, इज्जतनगर में आयोजित हुये।
- खाद्य स्वच्छता पर प्रथम अल्पकालीन कार्यक्रम अप्रैल से जुलाई, 1980 में पशु–चिकित्सा जन स्वास्थ्य प्रभाग, भारतीय पशु–चिकित्सा अनुसंधान संस्थान, इज्जतनगर में आयोजित हुआ।
- कृषि एवं खाद्य संगठन/विश्व स्वास्थ्य संगठन के खाद्य स्वच्छता के अनुसंधान एवं प्रशिक्षण सहयोगी केन्द्र इंस्टीट्यूट आफ वेट्रनरी मेडिसन–फेडरल हेल्थ आफिस, पश्चिमी बर्लिन, जर्मनी के सहयोग से दक्षिणी–पूर्वी एशियाई देशों के पशु–चिकित्सकों एवं स्वास्थ्य अधिकारियों के लिये अंतर्राष्ट्रीय खाद्य स्वच्छता पर अग्रिम सूक्ष्म जीवाणु विज्ञानी विधियों पर विश्व स्वास्थ्य संगठन कार्यशाला भारतीय पशु–चिकित्सा अनुसंधान संस्थान, इज्जतनगर द्वारा सम्पन्न हुयी।
- राष्ट्रीय संक्रामक रोग संस्थान (एन.आई.सी.डी.) नई दिल्ली/ भारतीय पशु–चिकित्सा अनुसंधान संस्थान, मुक्तेश्वर/इज्जतनगर में जून, 1977 में भारत में पशुजन्य रोगों एवं उनके नियंत्रण विषय पर द्वितीय राष्ट्रीय संगोष्ठी आयोजित हुयी।
- भारतीय पशु–चिकित्सा अनुसंधान संस्थान, मुक्तेश्वर में अप्रैल, 1970 में विश्व स्वास्थ्य संगठन की पशु–चिकित्सा जन स्वास्थ्य विषय पर क्षेत्रीय संगोष्ठी आयोजित हुयी।
- पशु–चिकित्सा जन स्वास्थ्य सेवायें एवं उनका संगठन विषय पर विश्व स्वास्थ्य संगठन की क्षेत्रीय तथा अंतरक्षेत्रीय संगोष्ठी विश्व स्वास्थ्य संगठन के क्षेत्रीय कार्यालय, नई दिल्ली/ भारतीय पशु–चिकित्सा अनुसंधान संस्थान, मुक्तेश्वर में अक्टूबर, 1974 में सम्पन्न हुयी।

इन विषयों में शोध पत्रों के अतिरिक्त आप के प्रमुख प्रकाशन निम्नलिखित हैं–

सिंह, सी. एम. (1974) डा. ए. श्रीनिवासन मेमोरियल लेक्चर्स एट मद्रास वेट्रनरी कालेज, मद्रास, पृष्ठ 1–51, यूनीवर्सिटी आफ मद्रास, तमिलनाडू।

सिंह, सी. एम. (1981) प्राब्लम्स आफ फूड बॉर्न इनफेक्शंस एंड इंटासिकेशंस इन इंडिया–स्टेटस पेपर, पृष्ठ 1–34, भारतीय पशु–चिकित्सा अनुसंधान संस्थान, इज्जतनगर, उ. प्र.।

सिंह, सी. एम. एंड कउलीकोवस्काई ए. (1985) डैंजर लर्कस इन अवर फूड। वर्ड हेल्थ ऑरगेनाईजेशन (डब्लू एच ओ) जुलाई, 5–7।

सिंह, सी. एम. (1979) प्राब्लम्स आफ फूड बोर्न इनफेक्शंस एंड इनटाक्सीकेशंस एंड देयर वर्किंग प्रपोजीसन इन साऊथ इस्ट एशिया (पेपर प्रस्तुति)। डब्लू. एच. ओ. इन्टर कंट्री वर्कशाप आन एडवांस्ड माइक्रोबायलोजिकल मेथडस इन फूड हाइजिन फर. 5–मार्च 3, 1979, आई वी आर आई, इज्जतनगर इन कोलाबोरेशन विद एफ ए ओ./ डब्लू एच ओ सेन्टर फार रिसर्च एंड ट्रेनिंग इन फूड हाइजिन, इंस्टीटयूट ऑफ वेटरनरी मेडिसीन फेडरल हेल्थ आफिस, बर्लिन (वेस्ट), जर्मनी।

अध्याय – सात

डा. चिंता मणि सिंह – व्यक्तित्व

शुद्ध शाकाहारी :– डा. चिंतामणि सिंह बचपन से ही शुद्ध शाकाहारी हैं। शाकाहारी होने के कारण पी–एच. डी. करने के समय अपने अमेरिका प्रवास के दौरान उन्होंने आहार सम्बन्धी बहुत सी कठिनाइयाँ उठायीं। उन्होंने लम्बे समय तक सब्जी, फल व दूध के आहार पर अपना समय गुजारा। उन्हें विदेशी भोजों में अनेक बार केवल सलाद खाकर ही रहना पड़ा। डा. साहब की धर्मपत्नी भी उन्हीं की भांति शाकाहारी हैं। शाकाहारी डा. सिंह ने भारत में कुक्कुट, अंडा, मछली और मांस उत्पादन एवं इसकी प्रौद्योगिकी को निरंतर बढ़ावा दिया। डा. सिंह ने अपने बच्चों को मांसाहार के प्रति हतोत्साहित नहीं किया। वे मांस के पोषक महत्व को समझते हैं, अतः उनके परिवार में स्वयं, पत्नी तथा एक पुत्र को छोड़कर शेष मांसाहारी हैं।

इस पुस्तक के लेखन के दौरान डा. सिंह के साथ मुझे अनेक बार रुकने तथा जलपान और भोजन करने का सौभाग्य मिला। उनका भोजन हमेशा सादा पाया किंतु वे पौष्टिकता का ध्यान रखते हैं। मैंने प्रायः उन्हें जलपान में दूध में कॉर्न फ्लेक, चाय, केले या अन्य फलाहार करते पाया। शाम को फल के जूस, लईया, चना, मूंगफली, फलों यथा केले, संतरा, कीनू, सेब आदि का नाश्ता करते देखा। मुझे भी उन्होंने प्रेमपूर्वक खिलाया। वे रात्रि में सादा भोजन करते हैं, जिसमें दाल चावल, रोटी, सब्जी आदि होते है। वे हरी सब्जियां खाना अधिक पंसद करते हैं। अनेक बार सादी खिचड़ी, तहेरी (वेजीटेबल पुलाव), दही आदि रात्रि भोजन के अंग होते हैं। श्रीमती सिंह इस आयु (+75 वर्ष) में भी स्वयं भोजन बनाती है तथा पाक कला में कुशल है। वे प्यार से खाना खिलाती हैं जिसका स्वाद अतिथि जल्दी नहीं भूलता।

वक्ता:– डा. चिंता मणि सिंह प्रकांड वक्ता हैं। ऐसा उनके निरंतर अध्ययन के कारण संभव है। सभा, गोष्ठी में तथा आंगतुकों के साथ वे 8–10 घंटे तक निरंतर ऊँचे स्वर में चर्चा करते रहते हैं तथा अपनी बात

समझाते हैं। अपने उद्घाटन या मुख्य अतिथि भाषण, समापन उद्बोधन वे एक–डेढ़ घंटे तक बोलते हैं तथा अपनी बातों में वे शोध में वर्तमान, निजी अनुभवों तथा व्यक्तिगत जीवन सम्बन्धी उदाहरण प्रस्तुत करते कई बार उनके लम्बे भाषणों से श्रोता उक्ता जाते हैं। अपने व्याख्यान के दौरान वे किसी आलेख का कभी भी अनुगमन नहीं करते हैं।

सादगी :– डा. चिंतामणि सिंह अत्यंत सादगी पसंद व्यक्ति रहे हैं। यह संभवतः उनकी ग्रामीण पृष्ठभूमि एवं जीवन का मूल सिद्धान्त (उद्देश्य) समझने के कारण हैं। गीता अध्ययन एवं इसकी समझ उन्हें सदैव सादगी व ओर आकर्षित करती रहती है। उनका कार्यालय इसका प्रतीक है। जब व भारतीय पशु–चिकित्सा अनुसंधान संस्थान, इज्जतनगर के निदेशक थे तो उनके कार्यालय में साधारण मेज और कुर्सियां थीं। कीमती कार्पेट, गलीचे, एअर कंडीशंस इत्यादि को उन्होंने अपने कार्यालय में कभी भी स्थान नहीं दिया। जहाँ तक उनके वस्त्रों का प्रश्न है, वे साफ–सुथरे वस्त्र पहनते हैं, जिसकी संख्या हमेशा सीमित रही है। इस पर हिसार में एक सांस्कृतिक कार्यक्रम में उन पर करारा व्यंग्य भी किया गया। तब छात्रों द्वारा उन्हें 'बोरी का बना सूट' भेंट किया गया। डा. सिंह इससे आहत नहीं हुये। उन्होंने इसका जबाव आइंस्टीन की सूक्ति को उद्धरित करके दिया– **'वह दिन विश्व के लिये बहुत दुर्भाग्यशाली होगा, जब फल के छिलके को उसके गूदे से अधिक महत्व दिया जायेगा।'** डा. चिंतामणि की पुत्री शशि ने उपर्युक्त प्रसंग सुनाया तथा बताया कि उनके परिवार में दिखावा वाले या फैशनेबल वस्त्रों को बहुत अधिक महत्व नहीं दिया जाता। घर में डा. सिंह धोती–कुर्ता पहनते हैं। उनकी बैठक में पुरानी आराम कुर्सियां हैं, जिन पर खद्दर की गद्दियां बिछी हैं। ऐसी कुर्सियां जौनपुर के गांवो में दिखती हैं। इन्हीं कुर्सियों पर विराजे श्रीमती सिंह एवं डा. सिंह आगन्तुकों से घंटों वार्ता करते हैं। घर में किन्हीं अति विशिष्ट अतिथि के आने पर ही वे सफारी पहनते हैं।

प्रतिभाओं का सम्मान :– डा. चिंता मणि सिंह ने प्रतिभाशाली छात्रों एवं वैज्ञानिकों का सदैव सम्मान किया एवं उनकी उच्च पदों पर नियुक्ति हेतु भरसक प्रयास किया। इस सम्बंध में उन्होंने रिश्तेदारी, जातीय, अंचलीय, क्षेत्रवाद या किसी अन्य बात की कभी भी परवाह नहीं की। भारतीय पशु–चिकित्सा अनुसंधान संस्थान, इज्जतनगर में अपने निदेशक कार्यकाल में

उन्होंने देश के प्रतिभाशाली आचार्यो को प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष पद पर नियुक्त किया। चंद विख्यात विभागाध्यक्ष थे– डा. बी. पांडा– कुक्कुट विज्ञान, डा. बी.एस. राज्या–विकृति विज्ञान, डा. पी.एन. भट्ट– पशु–आनुवंशिकी एवं प्रजनन, डा. एन.के. भट्टाचार्य– शरीर क्रिया विज्ञान, डा. ए.के.भार्गव–सर्जरी एवं मेडीसिन, डा.एच.वी.एस. चौहान– पक्षी रोग, डा. एम.पी.यादव– विषाणु विज्ञान, इत्यादि। इन प्रतिभाशाली वैज्ञानिकों के नेतृत्व में देश में पशु विज्ञान में अभूतपूर्व शोध एवं प्रौद्योगिकी ही नहीं जनित हुयी अपितु मानव विकास संसाधन भी विकसित हुये। विभिन्न संस्थानों में वैज्ञानिकों की नियुक्ति मण्डल के अध्यक्ष, विशेषज्ञ अथवा सदस्य के रुप में उन्होंने विदेशों से यदि उच्च शिक्षा प्राप्त या देश के किसी बेरोजगार प्रतिभाशाली नवयुवक को पाया तो उसकी तुरंत नियुक्ति करवायी। उन्होंने अयोग्य पात्रों को कभी भी प्रोत्साहित नहीं किया। डा.सिंह के इस गुण के कारण पहुँच–सिफारिश पर नौकरी प्राप्त करने की अपेक्षा रखने वाले उनके गांव और क्षेत्र के वासी या सम्बन्धी रुष्ट हो गये। उच्च पदों एवं अपने पक्ष में निर्णय न आने के कारण कुछ वैज्ञानिक और डा. सिंह के अपने शिष्य नाराज हो गये और कई उनके विरोधी बन गये। डा.सिंह ने इन बातों की कभी भी परवाह नहीं की।

पुस्तक प्रेम– डा. सिंह बचपन से ही पुस्तक प्रेमी थे। वे अपने गांव के मानव रोगियों के उपचार के लिये एलोपैथी, होम्योपैथी अथवा आयुर्वेद का विशेष अध्ययन करते थे। विद्यार्थी जीवन में वे कई बार कबाड़ियों की दुकान से पुरानी पांडुलिपियां, किताबें आदि भी खरीद लाते थे। उनके अध्ययन का शौक सदैव बरकरार रहा। भारतीय पशु–चिकित्सा अनुसंधान संस्थान, इज्जतनगर का निदेशक बनने पर डा. सिंह को अनेक पुस्तकें भेंट मिलती थीं तथा इसके अतिरिक्त वे और उनके बच्चे लगातार किताबें खरीदते रहते थे। उनके व्यक्तिगत सहायक श्री शाह डा. सिंह के बच्चों की किताब खरीदने की आदत से परेशान होकर शिकायत किया करते थे कि 'बच्चे किताब खरीदने में इतना अधिक धन व्यय कर देते हैं कि घर के मासिक खर्चे चलाने के लिये पैसा ही नहीं बचता है।' ज्ञातव्य है कि डा. सिंह जब निदेशक थे तो वह अत्यधिक व्यस्त रहते थे तथा अपने घर के खर्चे व रोजमर्रा की देखभाल आदि का भार अपने व्यक्तिगत सहायक श्री शाह को दे रखा था।

• डा. सी. एम. सिंह (1922 –)

डा. सिंह के साथ केन्द्रीय कृषि मंत्री इलेक्ट्रान सूक्ष्मदर्शी का अवलोकन करते हुये।

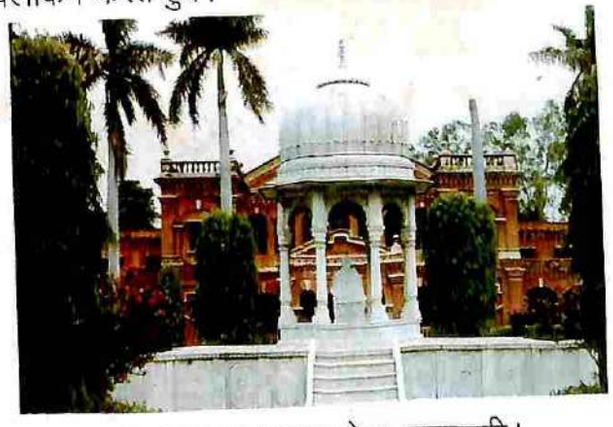

• उदय प्रताप कालेज, वाराणसी।

- डा. सिंह संस्थान में अति महत्वपूर्ण व्याक्तियों के साथ।

- अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान, नई दिल्ली में डा. सिंह *लाइफ टाईम एचीवमेंट* सम्मान प्राप्त करते हुये।

- हिसार में डा. सिंह अपने स्नातकोत्तर छात्रों के साथ।

श्रीमती सिंह का कहना है कि उनकी बेटी जब संस्थान के किसी वैज्ञानिक या प्रोफेसर के घर जाती और यदि उनके घर में पुस्तकें नहीं देखती तो वह वापस आकर शिकायत करती थी कि 'मम्मी, यह कैसे प्रोफेसर हैं कि इनके घर में पुस्तकें नहीं है ? डा. सिंह के बच्चों के मित्र उनके घर से पढ़ने के लिये पुस्तकें मांग कर ले जाया करते थे।

जब डा. सिंह सेवानिवृत्त हुये तो उनके निजी सामान में पुस्तकों की पेटियां सबसे ज्यादा थीं, जिसे उन्होंने अपने मथुरा के घर में रखा है। उनका इरादा इन पुस्तकों को किसी पशु–चिकित्सा महाविद्यालय या संस्था को दान करने का है। अनेक पुस्तकें एवं वैज्ञानिक पत्रिकायें उन्होंने भारतीय पशु–चिकित्सा परिषद्, नई दिल्ली को दान कर दी है। डा. सिंह के दिल्ली स्थित वसंत इनक्लेव आवास में 5–6 बुक सेल्फ पुस्तकों/पत्रिकाओं से भरी पड़ी हैं। इनमें विज्ञान, धर्म, साहित्य, सामान्य ज्ञान तथा विविध विषयों पर प्रसिद्ध प्रकाशकों की अंग्रेजी एवं हिन्दी पुस्तकें हैं। लाइफ साइंस श्रृंखला, नेशनल ज्योग्रेफिक, हिन्दी में रामचरित मानस, गीत गोविंद, वैशाली की नगरवधु इत्यादि चन्द उदाहरण हैं। पशु–चिकित्सा विज्ञान की पुस्तकों का तो उनका अपना निजी एवं विशाल भण्डार है।

श्रमिक कल्याण एवं हजार फूल–मालाओं का सम्मान– डा. सी. एम. सिंह के निदेशक कार्यकाल में संस्थान में कार्यरत सैकड़ों दैनिक श्रमिकों की सेवा स्थायी होना एक प्रमुख श्रमिक कल्याणकारी घटना थी। इससे संस्थान में कार्यरत श्रमिक उनके प्रति बहुत कृतज्ञ हुये तथा हार्दिक आभार प्रकट करने के लिये स्थायी हुये प्रत्येक श्रमिक ने उन्हें एक फूल–माला पहनाने का निश्चय किया। डा. सिंह ने बताया कि श्रमिकों ने उनसे कहा कि आप सम्मान कार्यक्रम में उपस्थित हों। आपको गले से माला उतारने का भी कष्ट नहीं करना पड़ेगा। उस दिन डा. सिंह को करीबन एक हजार फूल मालायें पहनायी गयीं। डा. सिंह एवं श्रीमती सिंह इस घटना को कभी भी नहीं भूलते हैं। श्रीमती सिंह कहती हैं कि इन्हीं श्रमिकों के कोटिशः आशीर्वाद एवं शुभकामनाओं से उनके परिवार का मंगल हुआ।

वट वृक्ष प्रसंग –सन् 1975 से पूर्व भारतीय पशु–चिकित्सा अनुसंधान संस्थान, इज्जतनगर के मुख्य द्वार के समीप 'ऊँट के कूबड़' जैसी एक जबरदस्त चढ़ाई वाली सड़क थी। रिक्शेवालों की इस चढ़ाई से छक्के

छूटते थे, अतः वे परिसर के अन्दर जाने का नाम नहीं लेते थे और प्रायः सवारियों को संस्थान के गेट पर छोड़ दिया करते थे। दूर से आमने–सामने से आने–जाने वाले वाहन नहीं दिखते थे, अतः दुर्घटना होने की बहुत संभावना होती थी। डा. सिंह ने इसके समतलीकरण की इच्छा व्यक्त की। तत्कालीन कृषि फार्म प्रबन्धक सूरज भान सिंह को इसके कार्यान्वयन का भार सौंपा गया। सी पी डब्लू डी से सम्पर्क किया गया तो उनका लम्बा–चौड़ा 'इस्टीमेट' आया, अतः संस्थान ने इस कार्य को स्वयं करवाना प्रारंभ किया। संस्थान में इस स्थान पर दो वट वृक्ष थे/हैं। डा. सी. एम. सिंह ने फार्म मैनेजर को निर्देश दिया कि किसी भी स्थिति में ये वट वृक्ष प्रभावित नहीं होने चाहिए। बस क्या था –किराये पर बुलडोजर मंगवाये गये तथा इनकी मिट्टी हटाने के लिये लगाया गया और टीले का समतलीकरण का कार्य प्रारंभ हो गया। हजारों मन फालतू मिटटी बायीं ओर धकेली जाने लगी। यह कार्य कई महीनों तक चलता रहा। अंततः प्रशासनिक भवन के समक्ष एक मैदान बना। वर्तमान में यहां स्टेडियम का प्लेटफार्म, मंच, सीढियां एवं खूबसूरत लान है। यह तत्कालीन फार्म मैनेजर के अथक परिश्रम का परिणाम है। जब यह कार्य चल रहा था, उन दिनों मैं संस्थान में एम. वी. एस–सी. का छात्र था तथा यह सब अपनी आंखो से देखा था तथा इसका वृत्तांत डा. सी. एम. सिंह से भी सुना।

टीले के समतलीकरण के परिणामस्वरुप वट वृक्ष की जड़ें दिखने लगीं तथा वे भद्दे लगते थे। डा. सी. एम. सिंह को एक अनाम पत्र मिला, जिसमें एक कविता लिखी हुयी थी। उसका शीर्षक था– 'हम दो वट वृक्ष'। उस कविता का सार था कि उपर्युक्त कार्य के फलस्वरुप हम नंगे हो गये हैं। हमारी जड़ें दिख रहीं हैं। लोग आते–जाते हमें देखते हैं तो हमें शर्म आती है। आप हम पर ध्यान दें। कठोर प्रशासक किन्तु कोमल हृदयी डा. सी. एम. सिंह ने तुरंत वट वृक्षों के समीप चबूतरा निर्माण तथा सौंदर्यीकरण का आदेश दिया और शीघ्र ही यह कार्य सम्पन्न हो गया। पुनः डा. सी. एम. सिंह को एक अनाम पत्र के धन्यवाद ज्ञापन वाली कविता मिली। अज्ञात कवि ने वट वृक्षों को चबूतरारुपी वस्त्र पहनाने पर उनकी तारीफ व कृतज्ञता ज्ञापित किया। डा. सिंह ने इस प्रसंग का संस्मरण सुनाते हुये उस अज्ञात कवि को भी धन्यवाद दिया, जिसने इस समस्या की ओर उनका ध्यानाकर्षित किया तथा इस दुष्कर कार्य को अंजाम देने वाले कृषि फार्म मैनेजर के प्रति कृतज्ञता प्रकट की।

संतुष्टिदायी कार्य

भारतीय पशु–चिकित्सा अनुसंधान संस्थान, इज्जतनगर से सेवानिवृत्त होने के समय डा. सिंह के समक्ष प्रश्न था कि वे आगे का समय कैसे गुजारेंगें। तभी उन्हें संघ लोक सेवा आयोग, नई दिल्ली का एक पत्र मिला। उन्हें आयोग ने भारतीय प्रशासनिक सेवा की चयन समिति का सदस्य बनाया था। डा. सिंह ने इस कार्य को तीन वर्षो तक किया। इससे वह बहुत संतुष्ट रहे तथा साक्षात्कार देने आने वाले मेधावी (टैलेन्टेड) नवयुवकों के अनुभव प्राप्त किये। यह कार्य वह चुपचाप करते रहे, यहां तक कि दिल्ली में उनके पास–पड़ोस व नजदीकी लोगों को भी उनके इस कार्य का ज्ञान नहीं हो सका। आप संघ लोक सेवा आयोग के चिकित्सा अधिकारी चयन बोर्ड के अध्यक्ष थे।

जज बनते तो

डा. सी. एम. सिंह का कहना है कि चूंकि उनके पिता की ख्वाहिश थी कि वे वकील बनें, अतः उनके पशु–चिकित्सक बनने से वे प्रसन्न नहीं हुये। जब डा. सी. एम. सिंह भारतीय पशु–चिकित्सा अनुसंधान संस्थान, इज्जतनगर के निदेशक नियुक्त हुये तो उनकी बड़ी पुत्री श्यामा (श्रीमती डा. श्यामा सिंह) ने अपने दादाजी से पूछा कि अब तो आप खुश हैं आपका बेटा इतनी बड़ी पोस्ट पर है। उनके सरल ग्रामीण पिता ने असहमति जताते हुये कहा कि जज बनते तो कुछ और ही बात होती। श्यामा ने फिर दादाजी को समझाया कि निदेशक, भारतीय पशु–चिकित्सा अनुसंधान संस्थान, इज्जतनगर पद का क्या महत्व है तथा उनके अधीन कितने आचार्य, वैज्ञानिक, अधिकारी और कर्मचारी कार्य करते हैं और निदेशक का पद जज के पद से कहीं बड़ा है। तब वयोवृद्ध ने मुश्किल से सिर हिलाकर सहमति प्रकट की।

डा. सी. एम. सिंह एवार्ड

डा. सिंह के योगदान से ऋणी पशु–चिकित्साविदों ने उनके सम्मान में 'डा. सी. एम. सिंह एवार्ड' प्रारम्भ किया है। भारतीय पशु–चिकित्सक विकृति विज्ञानी एसोसियेशन (आई ए वी पी) डा. सी.एम. सिंह के सम्मान में वर्ष 1982 से इंडियन जर्नल ऑफ वेट्रनरी पैथोलोजी में प्रकाशित सर्वश्रेष्ठ

लेख के लेखक/लेखकों को प्रति वर्ष डा. सी. एम. सिंह एवार्ड प्रदान करती है। इस पुरस्कार से अब तक 40 से अधिक पशु–चिकित्सा विकृति विज्ञानी अथवा पशु रोग अन्वेषणकर्ता सम्मानित हो चुके हैं। इसी प्रकार से भारतीय पशु–चिकित्सक सूक्ष्म जीव–विज्ञानियों, प्रतिरक्षा विज्ञानियों एवं संक्रामक रोग के विशेषज्ञों (आई ए वी एम आई) ने भी इंडियन जर्नल ऑफ कम्परेटिव माइक्रोबायोलोजी, इम्यूनोलोजी एंड इन्फेक्शियश डिसीजेज जर्नल में प्रकाशित होने वाले सर्वश्रेष्ठ लेख पर डा. सी.एम. सिंह एवार्ड देना प्रारम्भ किया है।

क्रीड़ा प्रेम - सी. एम. सिंह क्रिकेट ट्राफी

डा. सिंह क्रीड़ा प्रेमी हैं तथा संस्थान में खेलों को प्रोत्साहन देते थे। उनके कार्यकाल में इज्जतनगर में मुख्य प्रशासनिक भवन के समक्ष क्रीड़ांगन या स्टेडियम का निर्माण इस बात का सर्वोत्तम प्रमाण है। डा. सिंह ने सन् 1967 में संस्थान में क्रिकेट हेतु एक ट्राफी प्रदान की जो कि प्रति वर्ष स्टाफ और छात्रों के मध्य हुये मैच की विजेता टीम को प्रदत्त की जाती है। प्रथम क्रिकेट मैच को याद करते हुये डा. सिंह ने बताया कि वे निदेशक के नाते स्टाफ टीम के कप्तान थे तथा स्टाफ टीम ने उक्त वर्ष मैच जीता। खेल के आयोजक ने मैच समाप्त होने पर, श्रीमती सिंह को क्रीड़ागणन में ले आये तथा उन्होंने विजेता टीम के कप्तान तथा अपने पति डा. सी. एम. सिंह को अपने हाथों से ट्राफी प्रदान करवायी। कालांतर में डा. सिंह क्रिकेट मैच के दिन स्टाफ क्लब अतिथि गृह में दो टीमों को दोपहर के भोजन हेतु आमंत्रित करते थे। श्रीमती सिंह ने आग्रह किया कि टीमों को निदेशक आवास में भोजन करने के लिये आमंत्रित किया करें। स्टाफ की टीम प्राय: मैच जीता करती थी।

साहब के मन में छोटे के लिये अपनापन है : मो. रशीद (पूर्व स्टाफ कार ड्राईवर)

गोस्वामी तुलसीदास का एक प्रसिद्ध दोहा है – 'जाकी रही भावना जैसी, प्रभु मूरत देखि तिन तैसी।' मो. रशीद ने डा. सिंह एवं उनकी उपलब्धियों को एक भिन्न दृष्टि से देखा। मो.रशीद डा. सी.एम. सिंह की स्टाफ कार के ड्राइवर थे तथा वे उनके अनेक वर्षों तक निकटतम सहयोगी रहे। उनसे जब डा. सिंह तथा उनके कार्यों के बारे में पूछा गया तो वे अतीत में

खो गये। रशीद के अनुसार जब साहब शुरू-शुरू में आये तो उन्होंने तीन बड़े-बड़े काम करने के वायदे किये और उन्हें बाखूबी पूरा किया। पहला-संस्थान की लम्बी-चौड़ी चारदीवारी को बनवाया। इससे पहले तार की फैंसिंग थीं। आस-पास के गाँव वाले तथा उनके पशु कैम्पस में घुस आते थे तथा सरकारी नुकसान, चोरी आदि की घटनायें होती रहती थीं। चारदीवारी से संस्थान की सुरक्षा मजबूत हुयी। दूसरा यहां के लेबर (मजदूर) स्थायी हुये तथा उन्हें जी.पी.एफ., पेंशन, ग्रेच्युटी आदि की सुविधायें मिलीं। इससे मजदूरों का कल्याण हुआ और उनका भविष्य सुधरा। तीसरा-उन्होंने बड़ी-बड़ी बिल्डिंग बनवायीं। उनके समय की सबसे बड़ी घटना थी राष्ट्रपति श्री वी.वी. गिरि का यहां आना तथा माडुलर लैबोरेटरी भवन (वाई शेप) का 1972 में शिलान्यास। रशीद बताते हैं कि साहब के जमाने में कई ट्रैक्टर खरीदे गये। पहले मात्र एक ट्रैक्टर था तथा पूर्व-निदेशक डा. पी.जी. पांडेय के समय में शायद पहली स्टाफ कार खरीदी गयी थी। उस काल में संस्थान में तांगे का प्रयोग किया जाता था। ट्रैक्टर आने के बाद फार्म के जमीन की लेबलिंग की गयी। ट्यूबवेल लगे तथा पानी की किल्लत दूर हुयी। इससे फार्म में चारा उत्पादन बढ़ा। फीड टैक्नोलाजी यूनिट, जिसमें पशु दाना तैयार किया जाता है, भी उसी काल में बनी। डा. सिंह के सम्बन्ध में मो.रशीद का कहना है–'वे बहुत पंक्चुअल' थे। दौरों पर जाने के लिये जो समय देते थे, उसके अनुसार सदैव तैयार रहते थे। कभी भी इंतजार नहीं करवाते थे। वे कभी भी नाराज नहीं होते थे। हमेशा शाबाशी देते थे। डा. सिंह सारे इंस्टीट्यूट में पैदल घूमते थे तथा कार्यों का निरीक्षण करते थे। वे बोल्ड थे तथा राजनैतिक नेताओं की बात अनसुनी कर देते थे। रशीद का कहना है कि साहब हमेशा मुक्तेश्वर की तरक्की का ख्याल रखते थे। कुछ और बतायेंगे? इस प्रश्न पर मो. रशीद ने कहा– मैने सन् 1960 से 1994 तक आई.वी.आर.आई. में नौकरी की। इस दौरान आठ स्टाफ कारें चलायीं, बहुत से साहब देखे एवं कई डाइरेक्टरों के साथ ड्राईवर रहा। डा. सी.एम. सिंह के साथ तो मुझे लगा ही नहीं कि मैं नौकरी कर रहा था या सरकारी नौकर था। उनके (डा. सिंह के) मन में छोटों के प्रति बहुत अपनापन है। मैंने "शुक्रिया" कहकर रशीद जी को विदा किया। डा. सिंह के संस्थान में आने पर रशीद जी उन्हें हमेशा सलाम करने आते है। (लेखक द्वारा 12 जुलाई, 1997 को लिये गये एक साक्षात्कार पर आधारित)।

डा. सिंह भारतीय पशु-चिकित्सा अनुसंधान संस्थान के पुनरोधारक थे - श्री गंगाराम कटारिया

श्री गंगाराम कटारिया भारतीय पशु–चिकित्सा अनुसंधान संस्थान, इज्जतनगर, में डा. सिंह के व्यक्तिगत सहायक (पी.ए.) तथा अनेक वर्षों तक निकटतम सहयोगी रहे। वे उनके गोपनीय सहायक तथा संस्थान के सुरक्षा अधिकारी, सहायक प्रशासनिक अधिकारी तथा अंततः प्रशासनिक अधिकारी पद से सेवानिवृत्त हुये। सन् 1981 में सेवानिवृत्त श्री कटारिया इस समय इन्दिरा नगर, बरेली में निवास करते हैं तथा ऊँचा सुनते हैं और उन्हें दिखायी भी कम पड़ता है। श्री कटारिया के पुत्र व अपने अभिन्न साथी, डा. जगमोहन कटारिया, वैज्ञानिक, पक्षी रोग प्रभाग, भारतीय पशु–चिकित्सा अनुसंधान संस्थान, इज्जतनगर की सहायता से 6 जून ,1997 को पूर्वाह्न में मैंने उनका साक्षात्कार लिया। श्री कटारिया से लिखकर अनेक प्रश्न किये तथा उन्होंने हैडलेंस की सहायता से पढ़कर रुचिपूर्वक जबाव दिया। श्री कटारिया ने बताया–डा. सिंह लोगों से यह अपेक्षा करते थे कि वे ऐसा कार्य करें, जिससे राष्ट्र को लाभ पहुंचे। कर्मचारी इतना कार्य करें जो, उन्हें यह अहसास दिला सके कि उन्होंने अपने उस दिन के प्राप्त वेतन के साथ न्याय किया है। डा. सिंह वैज्ञानिकों से पूछते थे कि वे देश के लिये क्या कर सकते हैं? क्या वे ऐसी कोई मुर्गी विकसित कर सकते हैं, जो प्रतिदिन एक अण्डा दे? आदि–आदि।

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली के तत्कालीन महानिदेशक डा. बी.पी. पाल ने उस दौरान संस्थान का भ्रमण किया तथा इसे अच्छी स्थिति में नहीं पाया। कृषि फार्म की भूमि असमतल थी, परिसर वृक्षविहीन तथा हरियाली रहित था एवं प्रयोगशाला व अन्य भवनों की नितांत आवश्यकता थी। उन्होंने विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं के अन्तर्गत इस प्रकार के विकास कार्य सम्पन्न करने को कहा। डा. सिंह ने इस पर तत्काल ध्यान दिया और युद्धस्तर पर कार्यवाही की, जिससे वर्तमान आई.वी.आर.आई. परिसर विकसित हुआ। इसे संस्थान का पुनरोद्धार कहा जा सकता है।

श्री कटारिया का मानना है कि डा. सिंह अपने अथक प्रयासों से संस्थान को अन्तर्राष्ट्रीय मानचित्र पर पुर्नस्थापित कर सके। इसके लिये उन्होंने कृषि एवं खाद्य संगठन, विश्व स्वास्थ्य संगठन, अन्तर्राष्ट्रीय परमाणु

ऊर्जा आयोग, स्वीडिश अन्तर्राष्ट्रीय विकास एजेंसी, संयुक्त राष्ट्र सहायता, पब्लिक ला–480, डैनिश अन्तर्राष्ट्रीय विकास एजेंसी, कामनवेल्थ आदि संस्थानों से अन्तर्राष्ट्रीय सहयोगी शोध परियोजनाओं को लाने पर विशेष ध्यान दिया। वे स्वयं, अनेक विभागाध्यक्ष और वैज्ञानिक, अध्ययन यात्राओं, सम्मेलनों तथा डेपुटेशन या कंसलटैन्सी हेतु विदेश गये। उनके कार्यकाल में संस्थान में विदेशों से आने वाले वैज्ञानिकों, वैज्ञानिक दलों, प्रशिक्षार्थियों इत्यादि का तांता लगा रहता था। भारत के विभिन्न संस्थानों से कुलपतियों, निदेशकों, सांसदों, पत्रकारों, वैज्ञानिकों आदि के आने का अनवरत क्रम जारी रहा। देश भर के स्नातकोत्तर छात्रों के लिये यह सर्वोत्तम अध्ययन का केन्द्र बन गया।

श्री कटारिया ने बताया कि सादगी, ईमानदारी तथा मानवतावादी गुण डा. सिंह की सबसे बड़ी खूबी है। वे इससे सम्बन्धित एवं समर्थन में कई घटनाओं का उल्लेख करते हैं। एक बार डा. सिंह व श्री कटारिया सरकारी दौरे पर लखनऊ जा रहे थे। सिधौली, सीतापुर के समीप स्टाफ कार की एक बैलगाड़ी से दुर्घटना हो गयी। श्री कटारिया के हाथ की हड्डी टूट गयी। श्री कटारिया बताते हैं कि डा. सिंह ने मुझे सीने से लगा लिया तथा लगातार सांत्वना देते रहे। उन्होंने तुरंत प्राथमिक चिकित्सा की व्यवस्था की। बरेली फोन करके दूसरी गाड़ी मंगवायी और पूछा–लखनऊ जायें या वापस बरेली चलें? जब तक श्री कटारिया अस्वस्थ रहे, डा. सिंह उनके निवास पर निरंतर आते रहे या अन्य वैज्ञानिकों से उनकी मिजाजपुर्सी करवाते रहे।

श्री कटारिया ने कहा कि डा. सिंह आमंत्रित किये जाने पर सामाजिक, धार्मिक एवं अन्य कार्यक्रमों में सामान्यजन की भांति, विशुद्ध भारतीय वेश–भूषा में पधारते थे। ऐसे अवसरों पर वे विशेष आसन या स्थान ग्रहण नहीं करते थे। श्रीमती कटारिया जो कि हमारी बातचीत को लगातार सुन रही थीं, हस्तक्षेप करती हुयी श्रीमती सिंह की प्रशंसा में बोलीं, "वे बहुत विनम्र एवं असाधारण गुणों वाली महिला हैं। उनके सिर से पल्लू या शाल कभी भी नीचे नहीं गिरता और वे घर के काम–काज स्वयं करतीं। चूंकि डा. सिंह सरकारी कार्यों में अत्यंत व्यस्त रहते थे, अतः वे कुछ समय किचन गार्डनिंग में भी गुजारती थीं।

डा. सिंह की ईमानदारी की चर्चा करते हुये श्री कटारिया कहते हैं कि वे निदेशक आवास तक की भूमि में चारा उगवाया करते थे। स्टाफ कार यदि 4–6 कि.मी. भी दिल्ली या अन्यत्र उनके निजी कार्यों हेतु प्रयुक्त की गयी तो वे उक्त दूरी का मील के अनुसार सरकारी खजाने में भुगतान जमा करवाया करते थे। उन्हें स्मरण करके श्री कटारिया कहते हैं "कहाँ मिलेंगे ऐसे लोग?"। विशुद्ध वेतन पर गुजारा करने के कारण डा. सिंह की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं रहती थी। वे प्रायः जी.पी.एफ. से ऋण लेते रहते थे। दौरे पर जाने पर पी. ए. या अन्य स्टाफ से कुछ धन व्यवस्था कर लेने के लिये कहने में नहीं हिचकते थे। फिर बाद में श्री के.एल. शाह जी से सभी का हिसाब करवा देते थे। वह ईमानदारी का जमाना था व डा. सिंह ईमानदार व्यक्ति के सर्वोत्तम उदाहरण थे।

श्री कटारिया लगातार डा. सिंह के विषय में कुछ न कुछ बता रहे थे। सन् 1972 में डा. सिंह ने संस्थान की सुरक्षा व्यवस्था बहुत सुदृढ़ कर दी थी। सुरक्षा अधिकारी होने के नाते जब श्री कटारिया राउण्ड पर निकलते थे तो चौकीदार बताते थे कि डाइरेक्टर साहब पहले ही चक्कर लगा चुके हैं। डा. सिंह प्रशासनिक निर्णय लेने में अत्यंत कठोर थे। एक बार निर्णय लेने के पश्चात् किसी की कोई बात नहीं सुनते थे। उन्होंने भ्रष्टाचारी, अनुशासनहीन तथा अयोग्य कर्मियों व अधिकारियों की पदावनति या बर्खास्तगी भी की। कई कारणों से डा. सिंह के कार्यकाल के अन्तिम वर्षों में कई वैज्ञानिक एवं विभागाध्यक्ष उनके विरुद्ध संगठित हो गये तथा राष्ट्रीय समाचार पत्रों में उनके विरुद्ध छपवाया किंतु डा. सिंह का कोई बाल–बांका भी नहीं कर सका। श्री कटारिया की सम्पूर्ण बातों से डा. सिंह के बारे में यही निष्कर्ष निकला, जो कबीर अपने लिये कह गये थे–दास कबीर जतन से ओढ़ी, ज्यों की त्यों धर दीनी चदरिया। डा. सी.एम. सिंह साफ–सुथरी छवि के साथ यहां आये और राष्ट्र को बहुत कुछ देकर संस्थान से सेवानिवृत्त व विदा हुये। इसीलिये आज भी वे सबके आदर एवं श्रद्धा के पात्र हैं।

झंडा प्रकरण

संस्थान के गेट न. 2 पर कुछ श्रमिक अपनी नेतागिरी चमकाने एवं श्रमिक यूनियन बनवाने के लिये गेट मीटिंग कर संस्थान के भोले–भाले कर्मचारियों को निदेशक तथा प्रशासन के विरुद्ध भड़काने का अवसर तलाशते

रहते थे। डा. सिंह की सख्ती के कारण वे ऐसा करने में सफल नहीं हो पाते थे। किंतु जब डा. सिंह दौरे पर जाते थे तो मौके का फायदा उठाकर ऐसे कार्यक्रम रखे जाते थे। एक बार डा. सिंह दौरे से लौटे तो उन्हें 'गेट पर धरने' की सूचना मिली। वे संस्थान के सुरक्षा अधिकारी के साथ गेट पर पहुँचे तथा श्रमिकों के बैनर को उठवाकर गाड़ी में रखवा लिया, गेट पर हमेशा के लिये ताला लगवा दिया एवं आन्दोलन ने दम तोड़ दिया। इससे आहत तथा कथित श्रमिक नेतागणों ने राजनीतिज्ञों की सहायता से कृषि मंत्री, भारत सरकार तक उनकी शिकायत की। मनगढ़त आरोप लगाया कि डा. सिंह ने राष्ट्रीय ध्वज का अपमान किया है। डा. सिंह को इस कांड के सम्बंध में दिल्ली से बुलावा आया। तत्कालीन कृषि मंत्री उनसे अपरिचित नहीं थे। डा. सिंह ने अपना पक्ष प्रस्तुत किया तथा श्रमिक बैनर दिखाया। झूठे शिकायतकर्ता उल्टे ही मंत्रीजी की डांट खाकर लौटे। इस प्रकार से तथाकथित झंडा प्रकरण का अंत हुआ। तब से गेट न. 2 पर ताला लटक रहा है।

डा. सी. एम. सिंह सच्चे एवं प्रेरणादाता व्यक्ति हैं:- प्रो. बलवंत सिंह

अब से चार दशकों पूर्व पशु–चिकित्सा महाविद्यालय मथुरा में एम. वी. एस–सी. करने की इच्छा से पहुंचे युवक डा. बलवंत सिंह को पैथोलोजी विषय में प्रवेश दिया गया तथा आकस्मिक रुप से अथवा विधि–विधान से डा. सी. एम. सिंह 'गाइड' मिले। पी–एच. डी. करने के दौरान डा. सी. एम. सिंह उनके पुनः गाइड बने क्योंकि तब तक डा. सी.एम. सिंह वहाँ हिसार में अधिष्ठाता के रुप में पहुँच चुके थे तथा पैथोलोजी विषय में कोई अन्य गाइड नहीं था। डा. बलवंत सिंह शान्त, विनम्र, इकहरे बदन, सफेद दाढ़ी–बाल वाले अत्यंत सज्जन व ज्ञानवान व्यक्ति हैं। वे पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, लुधियाना में पैथोलोजी के प्रोफेसर, पशु–चिकित्सा महाविद्यालय में डीन रहे तथा वर्ष 1999 में सेवा–निवृत्त हुये हैं। वे प्रायः इज्जतनगर परीक्षक के रुप में आते रहते हैं। 19 फरवरी, 1999 को वह पैथोलोजी विभाग में पधारे थे तथा बातचीत करने के लिये सरलता से उपलब्ध हो गये। उन्होंने अपने गाइड एवं गुरु डा. सी.एम. सिंह में दो प्रमुख खूबियां बतायीं। प्रथम वे सच्चे एवं समर्पित व्यक्ति हैं एवं द्वितीय वे अच्छे गुरु तथा प्रेरणा उत्पन्न करने वाले व्यक्तित्व के स्वामी हैं।

डा. बलवंत सिंह के अनुसार– 'अपनी अत्यधिक ईमानदारी के कारण डा. सी.एम. सिंह ने व्यवसाय को बुलन्दियों पर पहुँया है। वे सदैव, अकेले कुछ न कुछ व्यवसाय के लिये करते रहते हैं, चाहे आई. वी.आर.आई. के निदेशक रहे हों अथवा वी.सी. आई. के अध्यक्ष। डा. सिंह व्यवसाय के कार्यों में इतना व्यस्त रहते थे कि उन्हें यह ज्ञान नहीं था कि उनके बच्चे किन कक्षाओं में पढ़ते हैं अथवा उनके पारिवारिक जीवन पर कुप्रभाव।

डा. बलवंत सिंह डा. सी. एम. सिंह के दूसरे गुण की व्याख्या करते हुये कहते हैं कि वे सकारात्मक प्रवृत्ति वाले व्यक्ति हैं। आगन्तुक को विशिष्ट कार्य करने के लिये प्रेरित करते हैं तथा जब उन्हें लगता है कि आगन्तुक कार्य करने की मनोस्थिति में आ गया है तो वह उससे कहते हैं– तुम ही वह व्यक्ति हो, जो अमुक कार्य कर सकता है। डा. बलवंत सिंह किसी गुरु का यह श्रेष्ठ गुण मानते है, जो कि डा. सी. एम. सिंह में है।

डा. बलवंत सिंह उन्हें श्रेष्ठ शोधकर्ता, भारत में पशु–चिकित्सा विज्ञान शिक्षा का मानकीकरण करने वाला तथा सुधारक मानते हैं। भारतीय पशु–चिकित्सा परिषद के माध्यम से डा. सी. एम. सिंह भारत में वेट्रनरी प्रैक्टिस को कानून के दायरे में लाये।

डा. बलवंत सिंह ने अपनी पी–एच.डी. के कार्य के सम्बंध में बताया कि भैंस के विभिन्न अंगो में अंतःभर्रण क्षतियां (Infiltrative lesions) खोजने के कारण लिम्फोसार्कोमा के विवाद को रोक लगी। इसके लिये उन्होंने भैंस के विभिन्न अंगों का गहनता से अध्ययन किया तथा उसे लिम्फोसार्कोमा प्रमाणित किया। ज्ञात हो कि डा. सी.एम. सिंह इसे अपनी सर्वश्रेष्ठ रिसर्च मानते हैं।

दृढ़ प्रतिज्ञा

डा. सिंह दृढ़ प्रतिज्ञा स्वभाव के स्वामी हैं। एक बार निश्चय करने के पश्चात् वे प्रायः अपना फैसला नहीं बदलते हैं। किसी निर्णय से पूर्व के उसके कानूनी भाग को भली–भांति देखते हैं। फिर वे उस पर अटल रहते हैं। प्रतिकूल से प्रतिकूल परिस्थितियों में कानूनी संघर्ष करते हैं। फिर वे उस पर अटल रहते हैं। इस बात का उन्होंने एक उदाहरण बताया। भारतीय पशु–चिकित्सा परिषद और भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् में पशु–चिकित्सा महाविद्यालयों में 10–15 प्रतिशत सीटों की प्रवेश परीक्षा सम्पन्न करवाने में

विवाद हो गया। प्रथम बार इस परीक्षा को भारतीय पशु–चिकित्सा परिषद ने करवाया था। भा.कृ.अ.प. इस मामले को उच्च न्यायालय ले गयी। न्यायालय ने इस कार्य का भा.कृ.अ.प. के पक्ष में निर्णय दिया। भा.प.चि.प. इस मामले को सर्वोत्तम न्यायालय में ले गयी। भा.प.चि.प. के अधिकारी, वकीलों इत्यादि को लगता था कि न्यायालय का फैसला भा.कृ.अ.प. के पक्ष में जायेगा किंतु डा. सिंह को पूर्ण विश्वास था कि ऐसा नहीं होगा। वे मुकदमे में रूचि लेकर केस का जल्दी से जल्दी फैसला करवाना चाहते थे। अंततः डा. सिंह की बात सत्य सिद्ध हुयी। जनवरी 2000 में न्यायालय ने यह फैसला सुनाया कि पशु–चिकित्सा विज्ञान महाविद्यालय की 10–15 प्रतिशत सीटों की प्रवेश परीक्षा भारतीय पशु–चिकित्सा परिषद् करवाये। सन् 2000 की परीक्षा भा.प.चि.प. ने सम्पन्न करवायी। ऐसा डा. सिंह के दृढ़ प्रतिज्ञा स्वभाव के कारण संभव हुआ। वे कहते हैं Dontt be defeatist अर्थात् पराजयवादी मत बनो, न्यायोचित बात के लिये संघर्ष करो। हमेशा सफल होगें।

कृतज्ञता

पशु–चिकित्सा विज्ञान में सर्वोच्च पद पर पहुंचे डा. सिंह इस विषय में योगदान करने वाले प्रारंभिक अधिकारियों में सरदार बहादुर ऊधम सिंह, उपनिदेशक डा. एच. बी. शाही तथा डा. आर. एल कौरा निदेशक पशुपालन विभाग, उत्तर प्रदेश को मानते हैं। निदेशक डा. कौरा ने डा. सिंह को मुख्यालय में पदस्थ करने का निर्णय किया था। डा. सिंह ने उन्हें स्पष्ट कहा–वे उच्च अध्ययन हेतु अमेरिका जाना चाहते हैं अतः उन्हें तब तक पशु–चिकित्सा महाविद्यालय, मथुरा पदस्थ किया जाये। निदेशक डा. कौरा की बात को जब डा. सिंह ने स्वीकार नहीं किया तो वे प्रस्थान से पूर्व कार में बैठते हुये कह गये कि वे डा. सिंह के मार्ग में नहीं आयेंगे। कालान्तर में डा. सिंह की वेट्रनरी कालेज, मथुरा में नियुक्ति हुयी। मथुरा में डा. सिंह को कैरियर प्रगति में पशु आनुवंशिकी एवं प्रजनन के डा. आर. बी. सिंह का सहयोग एवं योगदान मिला। इन महानुभावों के सहयोग से डा. सिंह उच्च अध्ययन हेतु अमेरिका गये तथा डा. रनल्स के मार्ग दर्शन में पी–एच. डी. की उपाधि पूर्ण की हिसार में उनकी डीन के पद पर नियुक्ति के लिये डा. आर. एल. स्टीवैंसन के सकारात्मक सहयोग को भी वे नहीं भूलते हैं।

डा० सिंह निम्नलिखित वैज्ञानिक संस्थानों से जुड़े रहे हैं :

पथप्रदर्शक

डा० सिंह निम्नलिखित वैज्ञानिक संस्थाओं के संरक्षक, अध्यक्ष, फेलो, अजीवन सदस्य व सदस्य रहे हैं–

अध्यक्ष

- भारतीय कुक्कट विज्ञान एसोसियेशन
- भारतीय कुक्कट क्लब
- विश्व कुक्कट विज्ञान एशोसियेशन की भारतीय शाखा
- भारतीय पशु–चिकित्सा सूक्ष्म जीवाणु वैज्ञानिकों, प्रतिरक्षा वैज्ञानिकों तथा संक्रामक रोगों के विशेषज्ञों की एशोसियेशन।
- भारतीय पशु उत्पादन की एशोसियेशन।
- भारतीय एलर्जी और एप्लाइड कालेज।
- पशु–चिकित्सा विज्ञान परिषद।
- राष्ट्रीय पशु–चिकित्सा विज्ञान अकादमी।

फेलो

- भारतीय जनस्वास्थ्य एशोसियेशन
- भारतीय एलर्जी और एप्लाइड इम्यूनोलोजी कालेज

सदस्य

- भारतीय विज्ञान कांग्रेस
- भारतीय पशु-चिकित्सक संघ
- उत्तर प्रदेश पशु-चिकित्सक संघ
- सिग्मा XI
- फीजीटा
- अमरीकी जीवाणु विज्ञानियों की सोसाइटी की मिशीगन शाखा
- अमरीकी पशु–चिकित्सक जानपदिक विज्ञान सोसाइटी (फेलो)

- तुलनात्मक ल्यूकीमिया अनुसंधान और अन्य सम्बंधित रोगों पर अंतर्राष्ट्रीय एसोसियेशन।
- भारतीय पशु–चिकित्सा विकृति वैज्ञानिक एशोसियेशन।
- पशु–चिकित्सा जन स्वास्थ्य विश्व स्वास्थ्य संगठन की विशेषज्ञ समिति के सदस्य।
- जूनोसिस पर विश्व स्वास्थ्य संगठन विशेषज्ञ सलाहकार दल के सदस्य।
- पशु–चिकित्सा जानपदिक विज्ञान और अर्थशास्त्र के द्वितीय अंतर्राष्ट्रीय सिम्पोजियम की सलाहकार समिति के सदस्य।
- सोसाइटी के प्रबंध समिति के सदस्य।
- पशु–चिकित्सा जानपदिक विज्ञान और अर्थशास्त्र सोसाइटी के सदस्य।
- खाद्यजनित संक्रमणों और विषाक्तताओं की विश्व सभा की अंतराष्ट्रीय आयोजन समिति के सदस्य।
- सलाहकार सदस्य अनुभाग एः जीवाणु रिकेटशियाई और कवक जनित रोग अंक–2– हैंडबुक सीरीस इन जूनोसिस। जेम्स एच स्टील, प्रमुख सम्पादक, सी.आर.सी. प्रेस इंक, फ्लोरिडा, अमेरिका के सदस्य।
- भा.प.चि.अ.सं., हैब्बल, बंगलौर के भारतीय /डैनिश खुरपका और मुँहपका टीका परियोजना के मूल्यांकन समिति के सदस्य।
- पशु–चिकित्सा जनस्वास्थ्य की कृषि एवं आय संगठन / विश्व स्वास्थ्य संगठन की संयुक्त समिति तकनीकी रिर्पोट श्रंखला 573 के सदस्य।
- भारतीय दुग्ध विज्ञान एसोसियेशन।
- भारतीय विज्ञान कांग्रेस एसोसियेशन।
- राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी।
- भारतीय सूक्ष्म जीवाणु वैज्ञानिकों की एसोसियेशन।
- फिलिप आर. व्हाईट स्मारक व्याख्यान समिति।
- कृषि में उपयोग करने नाभकीय तकनीकों की सोसाइटी।
- भारतीय पशु–चिकित्सक एसोसियेशन।
- वैज्ञानिकों एवं प्रौद्योगिकों की एसोसियेशन।

अध्याय – आठ
सेवानिवृत्ति के पश्चात् योगदान

भारतीय विज्ञान कांग्रेस की प्लेटिनम जुबली में व्याख्यान

भारतीय विज्ञान कांग्रेस ने सन् 1988 में अपने 75वें अर्थात् प्लेटिनम जुबली वर्ष में पुणे में आयोजित वार्षिक सभा में डा. सी. एम. सिंह को 'रेट्रावायरसेस एस बायोलोजिकल थ्रैट इन मैन एंड एनीमल्स' विषय पर व्याख्यान देने हेतु आमंत्रित किया। यह डा. सिंह का प्रिय विषय था। अपने व्याख्यान की प्रथम पंक्तियों में डा. सिंह ने कहा–'रेट्रावायरल इनफैक्शंस इन मैन हैव बीन रिकागनाइज्ड ओनली फ्राम 1976 वेयर एस एनीमल रेट्रोवायरसेस हैव बीन स्टडीड मच अरलियर' अर्थात मनुष्यों में रेट्रोविषाणु संक्रमणों को केवल सन् 1976 से पहचाना गया है जबकि पशुओं के रेट्रा विषाणुओं पर बहुत पहले से अध्ययन चल रहा है। अपने 46 पृष्ठीय मुद्रित व्याख्यान में डा. सिंह ने रेट्रोविषाणुओं का परिचय, अश्वीय संक्रामक अरक्तता, विषाणु (इ.आई.ए.वी.) संक्रमण, विसना विषाणु (वी.वी.), संक्रामक अजा संधिशोथ– मस्तिष्कशोथ (सी.ए.इ.वी) संक्रमण, मानव प्रतिरक्षा न्यूनता विषाणु (एच.आई.वी.) संक्रमण तथा लेंटी विषाणुओं द्वारा उत्पन्न चुनौतियों पर प्रकाश डाला।

इस व्याख्यान में डा. सिंह ने सम्बंधित कार्यो तथा उपलब्धियों का भी उल्लेख किया, भारत में विसना–मेडी नामक रोग के नैसर्गिक केस या रोगी पशु सर्वप्रथम राज्या और सिंह ने 1964 में पहचाना था' (पृष्ठ 15 पैरा 2)। पुनः सन् 1970 में चौहान और सिंह ने इस रोग का नैदानिक विकृति विज्ञानी अध्ययन किया तथा पाया कि मेडी रोग से प्रभावित भेड़ों में लाल रक्त कोशिका तलछटीकरण (इ एस आर) दर की वृद्वि हो जाती है।' (पृष्ठ 15 पैरा 2)। बाद में इस रोग पर कई कार्यकर्ताओं ने अनुसंधान किया। ज्ञात है कि विसना विषाणु संक्रमण भेड़–बकरियों का बहु संस्थानीय रोग संलक्षण है जो कि लेंटी विषाणु द्वारा उत्पन्न होता है।

अजा संधि–मस्तिष्क शोथ

बकरियों की एक नयी बीमारी है– अजा संधिशोथ मस्तिष्कशोथ विषाणु (सी ए इ वी) संक्रमण। यह निरंतर बना रहने वाला बकरियों का रेट्रोविषाणु संक्रमण है जिससे युवा बकरियों में मस्तिष्कशोथ तथा वयस्क बकरियों में संधिशोथ उत्पन्न होता है । विकासशील देशों विशेषतया एशिया और प्रशांत महासागर के देशों में सी ए इ वी संलक्षण उस समय तक नहीं पहचाना गया था जब तक डा. सिंह ने फिलीपीन्स में आयातित एंग्लोन्यूबियन नस्ल की बकरियों (सिंह 1984, अप्रकाशित) तथा थाइलैण्ड में आयातित सानेन नस्ल की बकरियों में इनके होने का प्रतिवेदन नहीं किया था (पृष्ठ –22 चौथा पैरा)।

भैंस में लिम्फोसारकोमा

भारतीय पशु–चिकित्सा अनुसंधान संस्थान, इज्जतनगर में पिछले अनेक वर्षो से गोवंशीय लिम्फोसारकोमा विशेषतया भैसों में लिम्फोसारकोमा का अध्ययन किया गया। इस संलक्षण में भैसों के फेफड़े को अनोखे ढंग से प्रभावित करने वाला शोध–पत्र सिंह इत्यादि (1973) द्वारा पडोवा इटली में पांचवें तुलनात्मक ल्यूकीमिया अनुसंधान पर अन्तर्राष्ट्रीय सिम्पोसियम में प्रस्तुत किया गया। भारतीय भैसों में लिम्फोसारकोमा का सचित्र, स्थूल और ऊतक विकृति विज्ञानी वर्णन अन्यत्र किया गया, जिसके अर्न्तगत विभिन्न अंग, लसीका ग्रंथियाँ व अंतःस्रावी ग्रंथियां प्रभावित पायी गयीं। (सिंह, 1975, सिंह इत्यादि 1979, 1980, 1981)। इलेक्ट्रान सूक्ष्मदर्शी द्वारा सी–प्रकार के विषाणु प्रदर्शन के अतिरिक्त, इकोले नेशनल वेटरनेयर, मैशन एलफोर्ट, फ्रांस, हास्पिटल कोचिन, पेरिस, सेन्ट्रल वेटरनरी इंस्टीच्यूट, रोडरडम और फ्री यूनीवरसिटी ऑफ ब्रूसेल्स, बेल्जियम में किये इम्यूनोअवक्षेपण, रेडियोइम्यूनो ऐसे, एन्जाइम लिंक्ड इम्यूनोसार्बेट ऐसे (एलाइसा), रेडियोइम्यून प्रेसीप्रिटेशन परीक्षण अध्ययनों द्वारा भैंस के लिम्फोसारकोमा में रेप्लीकेटिंग फिल्टरेबल कारक प्रदर्शित किया गया। पुनश्चः यह भी ज्ञात हुआ कि इसके प्रतिजन की अन्य ज्ञात ल्यूकीमियाजन्य विषाणुओं से भिन्न संरचना है। डा. सिंह के अनुसार विषाणु के चरित्रण, इसके द्वारा उत्पन्न रोगजनन में योगदान, कोशकीय डी एन ए का अणुयीय समागम द्वारा अग्रिम अध्ययनों से पूर्ण उत्तर प्राप्त हो सकता है। सिंह इत्यादि (1981) के

अनुसार उन्हें इस तथ्य में कोई आश्चर्य नहीं होगा कि भैंस में रोग कारक विषाणु अन्य ल्यूकीमिया विषाणुओं यथा बिल्ली या माजार, गोवंशीय, शूकर के ल्यूकीमिया विषाणुओं से भिन्न सिद्व हो। (पृष्ठ 4 पैरा–3)।

लेंटी विषाणुओं की चुनौती

अपने सारगर्भित और प्रभावी व्याख्यान के अन्त में डा. सिंह ने लेंटी विषाणु द्वारा उत्पन्न चुनौतियों का उल्लेख किया। इस भाग का प्रथम और अन्तिम पैरा उद्धृत है 'अणुयीय विषाणु विज्ञान, प्रारंभिक प्रतिरक्षा विज्ञान, प्रतिरक्षा जैव उत्पादों और वैज्ञानिकों की आधुनिक प्रगति ने मानव के मृत्युदायक विषाणु (डेडली वायरस) तथा पशु के मारक (किलररोगों) ने चुनौतियों का सामना करने की प्रगति में मद्विम आशा की किरण दिखी है। लेंटी विषाणुओं ने स्पष्टतया प्रजाति, जाति, सम्प्रदाय, महाद्वीपों की बाधा पार कर सम्पूर्ण गोलार्द्ध को चेताया है, (पृष्ठ 43 प्रथम पैरा)।

इन सभी चुनौतियों का ध्यान रखते हुए यह स्वीकार करना होगा कि हमें अभी बहुत कुछ करना शेष है। ऐसी आशा है कि समस्त विश्व का मानव परिवार लेंटीविषाणुओं के जैविक खतरे/चुनौतियों का पूरी तरह से चौतरफा मुकाबला करेगा, (पृष्ठ 44 तीसरा पैरा)।

सिंह, सी. एम., सिंह, बी. एंड परिहार, एन. एस. (1973), पल्मोनरी इनवाल्वमेंट इन लिम्फोसारकोमा आफ इंडियन बफैलोस। फिफ्थ इंट. सिम्प. ल्यूकीमिया रिसर्च, पडोवा (इटली)। बिब. हिमेट. 39, 220–227, एस. कारगर। ए. जी. बसेल, स्विटजरलैंड।

सिंह, सी. एम. (1975) फाइनल टेक्निकल रिपोर्ट आफ पी एल 480 प्रोजेक्ट आन स्टडीज आन बोवाइन लिम्फोसारकोमा/ ल्यूकीमिया पर्टीकुलरली इन इंडियन बफैलोस पी. एल. 480 ग्रांट नं. एफ. जी. इन–338 प्रोजेक्ट नं. ए7–ए डी पी–24।

सिंह, बी., सिंह, के. पी. परिहार, एन. एस. , बंसल, एम. पी. एंड सिंह सी. एम. (1979) क्लिनिको–पैथोलोजिकल स्टडीज आन लिम्फोसारकोमा इन इंडियन बफैलोस (बुबेलस बुबेलिस)। जेंटा ब्ल. वेट. मेड. ए. 26: 460–46।

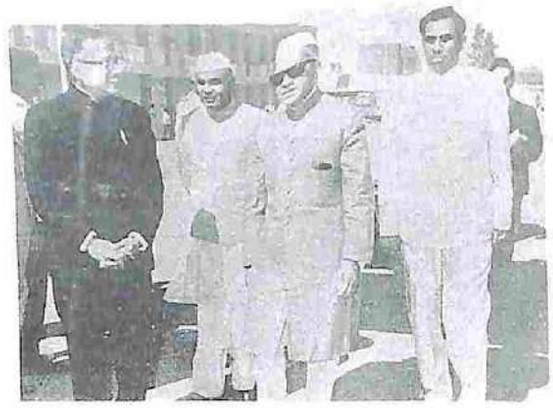

- डा. सिंह भारत के केन्द्रीय कृषि मंत्री श्री फखरुदीन अली अहमद को संस्थान में भम्रण करवाते हुये।

- भारतीय पशु–चिकित्सा विकृति–विज्ञान संघ द्वारा सम्मान समारोह में डा. सिंह

- भारत के राष्ट्रपति महामहिम आर. वेंकट रमनन डा. सिंह को डी. एस–सी. की मानद उपाधि प्रदान करते हुये।

- उपर्युक्त सम्मान समारोह में डा. सिंह सरस्वती के चित्र को माल्यार्पण करते हुये।

- भारत के राष्ट्रपति महामहिम वी.वी. गिरी भा.प.चि.अ.सं., इज्जतनगर में वैज्ञानिकों को सम्बोधित करते हुये।

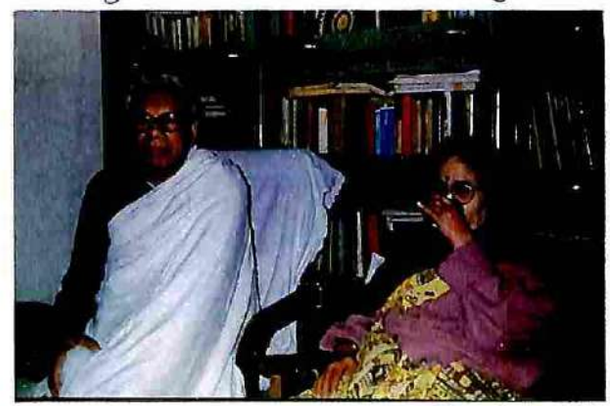

- अपने दिल्ली स्थित निवास में श्रीमती एवं डा. सिंह ।

सिंह, सी. एम. (1980) लिम्फोसारकोमैटस इनवाल्वमेंट ऑफ रिप्रोडक्टीव एंड इंडोक्राइन आर्गेन्स इन इंडियन बफैलोस। जेंटा. ब्ल. वेट. मेड. ए. 27: 597–606।

सिंह, सी. एम., बंसल, एम. पी. और सिंह के. पी. (1981) स्टडीज ऑफ द एशोसियेशन ऑफ ए फिल्टरेबल एजेन्ट विद बफैलो लिम्फोसारकोमा– एडवांसेस इन कम्परेटिव ल्यूकीमिया रिसर्च। एडीटर्स–डेविड एस. योहन एंड जेम्स आर. ब्लेकेंसेली। एल्सवेयर नार्थ हालैण्ड इंक 1982।

सिंह, सी. एम. (1985) डायग्नोसिस एंड कंट्रोल ऑफ कैप्राइन आर्थराइटिस इन्सेफेलेलाइटिस (सी ए ई) इन द इम्पोर्टेड सानेन गोट्स इन थाइलैण्ड। एफ ए ओ कंसलटैन्सी रिपोर्ट एफ ए ओ/आर ए पी ए, थाईलैण्ड।

सिंह, सी. एम. (1988) रेट्रोवाइरसेस एस बायलोजिकल थ्रीट टू मैन एंड एनीमल्स। पृष्ठ 1–44। 75वीं भारतीय विज्ञान कांग्रेस, पुणे। इंडियन साइंस कांग्रेस एशोसियेशन, 14 डा. बीरेश गुहा स्ट्रीट, कलकत्ता–17।

भारतीय पशु-चिकित्सा परिषद्

केन्द्रीय सरकार ने 2 अगस्त, 1989 को कृषि एंव सहकारिता विभाग नोटिफिकेशन एस.ओ. 2051 द्वारा 'वेट्रनरी काउंसिल आफ इंडिया, या भारतीय पशु–चिकित्सा परिषद का गठन किया। इसका उद्देश्य निम्नलिखित था – Veterinary Council of India is responsible for maintenance of minimum standards of veterinary education throughout the country, regulation of veterinary practice and matters concentrated there with or ancillary there। भारतीय पशु चिकित्सा परिषद अधिनियम, 1984 के अनुसार 27 सदस्य नामांकित किये गये। डा. चिंतामणि सिंह को इसका अध्यक्ष तथा डा. आर. पी. एस. त्यागी को उपाध्यक्ष चुना गया। प्रो. वी. राम कुमार इसके सचिव नियुक्त हुये। डा. सिंह के कार्यकाल में भारतीय पशु चिकित्सा परिषद ने निम्नलिखित प्रमुख कार्य सम्पन्न किये–

1. प्रांतों एवं केन्द्र शासित प्रदेशों में परिषद् की इकाइयों का गठन।

2. प्रदेशों एवं सम्पूर्ण देश में पशु–चिकित्सकों का अनिवार्य पंजीकरण ।

3. प्रत्येक पशु–चिकित्सा महाविद्यालय हेतु स्तरीय स्नातक शिक्षा कार्यक्रम का विकास।

4. संकाय, सुविधाओं के विकास हेतु मार्गनिर्देशक सिद्धान्तों का चयन एवं उनका का कड़ाई से अनुपालन।

5. स्नातक शिक्षा एवं परीक्षाओं हेतु समरुपी स्तरों की परीक्षा पद्धति का विकास।

जनवरी, 2000 को डा. सी.एम. सिंह भारतीय पशु–चिकित्सा पारषद् के अध्यक्ष तथा डा. जी.एस. चहल उपाध्यक्ष चुने गये। इस विषय पर इंडियन वेट्रनरी जनरल ने मार्च, 2000 में अपना सम्पादकीय लिखा।

राष्ट्रीय पशु–चिकित्सा विज्ञान अकादमी

राष्ट्रीय कृषि विज्ञान अकादमी की भांति राष्ट्रीय पशु–चिकित्सक अकादमी का गठन एवं सोसाइटी रजिस्ट्रेशन एक्ट 1860 के अन्तर्गत पंजीकरण किया गया है। यह एक रजिस्टर्ड निकाय है, जिसको भारत सरकार से आर्थिक सहायता प्राप्त होती है। अकादमी के फेलो सदस्य देश के पशु–चिकित्साविद् हैं इसका फेलो सदस्य बनने के लिये नामांकन किया जाता है। यह अकादमी भारत में पशु–चिकित्सा विज्ञान शिक्षा का मानकीकरण करने के लिये भारतीय पशु–चिकित्सा परिषद् की सहायता करेगी। डा. सिंह अकादमी के संस्थापक अध्यक्ष तथा फेलो हैं। ज्ञात है कि 18 दिसम्बर, 1996 को अकादमी ने देश के 100 पशु–चिकित्साविदों को अपनी फेलोशिप प्रदान कर सम्मानित किया है। जनवरी, 2000 को अपने दीक्षांत समारोह में वर्ष 1997 व 1998 वर्ष के लिये अनेकों पशु–चिकित्साविदों को फेलो / सदस्यता से सम्मानित किया।

निरंतर पशु–चिकित्सा शिक्षा

डा. चिंतामणि सिंह का मानना है कि "निरंतर पशु–चिकित्सा शिक्षा (कंटीन्यूड वेट्रनरी एजुकेशन या सी.वी.ई.) के बिना पशुपालन एवं

पशु–चिकित्सा विज्ञान में वांछित प्रगति असंभव है।" डा. सिंह पुणे में 22 जनवरी, 1997 को 'इंडियन एशोसियेशन फार एडवांसमेंट ऑफ वेट्रनरी साइंसेस' के चतुर्थ वार्षिक सम्मेलन को सम्बोधित कर रहे थे। उन्होंने कहा–कि देश में 38 हजार पशु–चिकित्सक तथा इतने ही परा–पशु–चिकित्सा कर्मी हैं। पहले पशु–चिकित्सकों के प्रशिक्षण एवं पुर्नप्रशिक्षण के प्रबन्ध थे, किन्तु जबसे कृषि विश्वविद्यालयों का उद्भव हुआ है, ऐसे कार्यक्रम कुछ कम हो गये हैं। देश के एक–दो प्रान्तों में पशु–चिकित्सा कर्मियों के पुर्नप्रशिक्षण के प्रबन्ध हैं। जिस प्रकार से भारतीय चिकित्सा परिषद् निरंतर चिकित्सा शिक्षा "सी.एम.ई." के कार्यक्रम चलाती है, ठीक उसी प्रकार से भारतीय पशु–चिकित्सा परिषद भी ऐसे कार्यक्रम चलायेगी। इसके लिये विविध विषयों में अल्प, मध्य एवं दीर्घकालिक प्रशिक्षण कार्यक्रम, रिफ्रेशर कोर्सेस आदि बनाये जा रहे हैं। ये कार्यक्रम मूलभूत सुविधायुक्त संस्थान चला सकेंगे, चाहे वे निजी संगठन, स्वयंसेवी संगठन, पशु–चिकित्सा महाविद्यालय अथवा भारतीय-कृषि अनुसंधान-परिषद के संस्थान हों।

डा. सी. एम. सिंह : जीवेम् शरदः शतम्

Doyen of the profession needs no 'introduction. He served in many positions with distinction and has created history in many facets including longest innings. He has been carrying the torch of the Veterinary Council of India with zeal and dedication and we are sure that he would continued to discharge his honors duties in his own splendid manner.

इंडियन वेट्रनरी जरनल आगे लिखता है कि "हम इस बात से बहुत प्रसन्न हैं कि भारतीय पशु–चिकित्सा परिषद् ने सर्वोच्च न्यायालय में अखिल भारतीय स्तर पर 15 प्रतिशत सीटों हेतु बी.वी.एस–सी एंड ए.एच. प्रतियोगात्मकर परीक्षा करवाने का मुकदमा जीत लिया है।" इस मुकदमा को प्रारंभ करवाने एवं अपने पक्ष में जीतने के पीछे डा. सी.एम. सिंह का व्यक्तित्व था।

अध्याय – नौ

प्रमुख व्याख्यान एवं दीक्षांत भाषण

भारत की अनेक पशुचिकित्सा विज्ञान संस्थानों, सोसाइटी एवं संघों ने डा. सिंह को अध्यक्षीय भाषणों, प्रमुख व्याख्यानों तथा विशेष स्मारक व्याख्यानों हेतु समय–समय पर आमंत्रित किया। इन व्याख्यानों द्वारा डा. सिंह ने भारत में पशुचिकित्सा विज्ञान पर अपनी विचार धारा, सिद्धान्त एवं दर्शन दिया। यहाँ कुछ के सार–संक्षेप प्रस्तुत हैं:

पंजाब कृषि विश्वविद्यालय लुधियाना में दीक्षांत भाषण

डा. सिंह को 28 अप्रैल, 1993 में पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, लुधियाना पंजाब को दीक्षांत समारोह में सम्बोधित करने हेतु आमंत्रित किया गया। इस अवसर पर आपने डा. खेम सिंह गिल, उपकुलपति; प्रबन्ध बोर्ड के सदस्यों; डा. बलवंत सिंह अधिष्ठाता, पशु–चिकित्सा विज्ञान महाविद्यालय; संकाय के सदस्यों, उपाधि प्राप्त करने वाले छात्रों एवं उपस्थित जन समुदाय को सम्बोधित करते हुये कहा– यहां आना उन्हें घर आना जैसा लगा क्योंकि सन् 1964 में वे पशु–चिकित्सा विज्ञान महाविद्यालय में अधिष्ठाता थे। डा. सिंह ने कहा–विख्यात कुलपति श्री पी. एन. थापर के नेतृत्व में इस महान विश्वविद्यालय में सेवा करते हुये मैंने विश्वविद्यालय प्रबन्ध एवं वैज्ञानिक कार्यो का प्रशासनिक अनुभव प्राप्त किया। यह मेरे जीवन का महत्वपूर्ण मोड़ सिद्ध हुआ जिसने मुझे बाद में 16 वर्षों से अधिक समय तक भारतीय पशु–चिकित्सा अनुसंधान संस्थान के निदेशक पद पर सेवा करने का सुअवसर प्रदान किया।

डा. सिंह ने सफल छात्रों को शुभ कामनायें एवं अनेक बधाईयां देते हुये शिक्षा, पशु–चिकित्सा विज्ञान में प्रगति तथा शताब्दी के अंत में सन्मुख समस्याओं पर अपने विचार प्रकट किये। उन्होंने कहा – "The modern world conceives education as a balanced amalgam of knowledge, skill and attitude. It has well defined objectives based on the need and structure of the society where the

learner is to use his education. Thus when we turn to the world scenario we may find certain variations in the system." आपने पशु–चिकित्सा विज्ञान शिक्षा के अन्तर्राष्ट्रीय सीनैरियो (परिपेक्ष्य) में, राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय संदर्भ में कुछ उदीयमान एवं विदेशी पशु रोगों, मानव एवं पशुओं हेतु रिट्रोविषाणुओं की जैविक वैज्ञानिक चुनौती, पशु–चिकित्सा विज्ञान में जैवप्रौद्योगिकी, ओपेन न्यूक्लियस ब्रीडिंग सिस्टेम (ओ एन बी एस) विथ मल्टीपल आव्यूलेशन इम्ब्रायो ट्रांसफर (एम ओ इ टी), भ्रूण प्रत्यारोपण के स्वास्थ्य नियंत्रण सम्बंधी विषयों पर प्रकाश डाला। भारतीय परिपेक्ष्य के सम्बंध में प्राचीन भारत में पशु–चिकित्सा विज्ञान, भारतीय पशु–चिकित्सा परिषद, पंजाब के पशु–चिकित्सा व्यवसायियों के चुनौती पूर्ण योगदान, गैर प्रैक्टिस–भत्ता (एन पी ए), महिला पशु–चिकित्सा तथा प्रसार कार्य पर वृहद चर्चा की। दीक्षांत भाषण के अंत में आपने उपकुलपति को दीक्षांत समारोह में भाषण देने का अवसर प्रदान करने के लिये धन्यवाद ज्ञापन करते हुये, उपाधियां, सम्मान एवं पुरस्कार प्राप्त करने वाले छात्रों को बधाई दी तथा उनके लाभकारी व्यवसायिक कर्म जीवन की कामना की ।

संदर्भ – सिंह, सी. एम. (1993) कनवोकेशन एड्रेस डिलीवर्ड एट द कनवोकेशन आफ कालेज आफ वेट्रनरी साइंसेस, पंजाब एग्रीकल्चरल यूनीवर्सिटी, लुधियाना, अप्रैल 28, 1993। पृष्ठ 1–28।

बेफ डेवलपमेंट रिर्सच फाऊंडेशन, पुणे द्वारा आयोजित कार्यशाला में कीनोट व्याख्यान

डा. सिंह ने बेफ डेवलपमेंट रिर्सच फाऊंडेशन , पुणे में सन् 1983 में पशुधन उत्पादन प्रौद्योगिकी में नवीनतम प्रगतियां (Recent advances in the livestock production technologies) कार्यशाला में 'गौ एवं भैंस झुंडों के सुधार में नये आयाम' विषय पर 'कीनोट' व्याख्यान दिया। इस अवसर पर आपने श्री मणिभाई, विशिष्ठ मेहमानों, अधिकारियों, वैज्ञानिकों तथा कार्यशाला के भागीदारों को सम्बोधित करते हुये उपर्युक्त विषय पर विस्तृत प्रकाश डाला।

डा. सिंह ने भारत में पशु–चिकित्सा विज्ञान सेवा में सम्मिलित पशु स्वास्थ्य देखभाल, रोगी पशुओं की चिकित्सा, पशु एवं पक्षीशालाओं का गठन

एवं प्रबंधन (स्थूल एवं सूक्ष्म), पशुओं, पशु उत्पादों तथा पशु वज्य पदार्थों से प्रसारित होने वाले रोगों से जनता का बचाव या संरक्षण होने का उल्लेख किया। मानव एवं पशुओं के लाभार्थ जैविक विविधता एवं पर्यावरण प्रदूषण नियंत्रण के अतिरिक्त उत्तरदायित्व के प्रति आगाह किया।

आपने इस व्याख्यान में जिन बातों पर प्रकाश डाला उनमें निम्नलिखित विषय प्रमुख थे–

1. राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय संदर्भ में कुछ उदीयमान (emerging) तथा विदेशज पशुरोग।

2. मानव एवं पशुओं के लिये जैविक चुनौती रैट्रो विषाणु ।

3. पशु–चिकित्सा विज्ञान में जैव प्रौद्योगिकी ।

4. खुली केन्द्रीय (न्यूक्लियस) प्रजनन पद्धति (ओ एन बी एस) तथा बहु डिम्बकरण भ्रूण प्रत्यारोपण (एम ओ ई टी)।

5. भ्रूण प्रत्यारोपण के स्वास्थ्य एवं वैधानिक रेग्युलेटरी (regulatory) पहलू।

इस व्याख्यान में डा. सिंह ने जोर देकर कहा कि "In the field of biotechnology ONBS, ETT and MOET has brought a break through in animal production" अर्थात् जैव प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में ओ एन बी एस, ई टी टी एवं एम ओ ई टी से पशु उत्पादन में क्रांतिकारी परिवर्तन आये हैं।

अपने व्याख्यान के सार में डा. सिंह ने स्वीकार किया कि शताब्दी के परिवर्तन के समय हमारे समक्ष भीमकाय (हरक्युलियन) कार्य हैं। उन्होंने कहा–"I wish and expect that workshop of this nature would sow the seeds for a meticulous planning, that will ferry us comfortably along the 21st century and bring brighter colour to the profession and fruits of its benefit to the people." अर्थात् मैं कामना एवं आशा करता हूँ कि इस प्रकार की कार्यशालायें उत्कृष्ट योजनाओं के बीज बोयेंगी जो कि हमें आरामपूर्वक 21वीं शताब्दी में प्रविष्ट करवायेंगी तथा हमारे व्यवसाय को ख्याति प्रदान करेंगी और आम लोगों को इसका लाभ प्राप्त होगा।

संदर्भ – सिंह, सी. एम. (1993) न्यूअर पर्सपक्टीव इन कैटल एंड बफैलो हर्ड इम्प्रूवमेंटस। वर्कशाप आन रीसेन्ट एडवांसेस इन द लाईवस्टाक प्रोडक्शन टेक्नोलोजीस। बेफ डेवलपमेंट रिसर्च फाऊंडेशन, कामधेनु, सेनापति बापत मार्ग, पूना।

डा. बी. दासगुप्ता स्मारक ओरेशन

डा. सिंह ने बी. सी. दासगुप्ता मेमोरियल ओरेशन भारतीय सार्वजनिक स्वास्थ्य संघ के 8 फरवरी, 1985 को नागरकोइल, कन्याकुमारी, तमिलनाडु में आयोजित 29वें सम्मेलन में '**भारत में खाद्यजन्य रोग**' विषय पर दिया।

इस अवसर पर व्याख्यान प्रारंभ करते हुये डा. सिंह ने कहा–हाल के वर्षो में खाद्यजन्य संक्रमण एवं अंतः विषाक्ततायें (intoxication) मानव जाति के लिये गंभीर समस्याओं जैसा महत्व प्राप्त कर चुकी हैं। खाद्यजन्य रोगों में योगदान के कारण अनेक अंतः रोगजनकों की उपस्थिति जानकर, खाद्यजन्य रुग्णताओं तथा गुणवत्ता युक्त स्वच्छ खाद्य के लिये सूक्ष्म जीवाणुयीय मानकों एवं सर्वीलेंस का विकास हुआ है। प्रगतिशील देशों में खाद्य विषाक्तता प्रतिवेदनों, जानपदिक विज्ञानी अन्वेषणों, खाद्यदूषण और खाद्य स्वच्छता शिक्षा के निरंतर मानीटिरिंग (निगरानी) उपाय खाद्यजन्य रोगों से बचाव हेतु आवश्यक हो गये हैं।

उन्होंने आगे कहा– हाल के वर्षो में खाद्य की सुरक्षा एवं गुणवत्ता का मूल्यांकन बढ़ते खाद्यजन्य संक्रमणों के प्रकट होने के कारण आवश्यक हो गया है ताकि इनकी रोकथाम की जा सके। दुर्भाग्यवश भारत में इस प्रकार की गुणवत्ता और सुरक्षा (quality and safety) नियंत्रण कार्यक्रम अपनी प्रारंभिक अवस्था में हैं। अतएव इस बात पर सम्बंधित अधिकारियों के ध्यान देने की तुरंत आवश्यकता है ताकि खाद्य निर्माण एवं प्रसंस्करण में लगे व्यवसायिक अपने उत्पादों के संतोषजनक जीवाणुविज्ञानी मानक तथा गुणवत्ता और सुरक्षा का स्तर बनायें रखें। इससे केवल भारतीय उपभोक्ताओं को सुरक्षा की प्रतिबद्धता ही नहीं मिलेगी अपितु विदेशी बाजार भी भारतीय खाद्य पदार्थो को आयात करने में आकर्षित होंगे।

आपने इस व्याख्यान में निम्नलिखित रोगों की चर्चा की–

1. जीवाणु संक्रमण – साल्मोनेल्ला, ब्रूसेल्ला, *माइकोबैक्टीरियम ट्यूबरकुलोसिस, काक्सीयेल्ला बर्नेटाई, स्ट्रेप्टोकोकस, साल्मोनेल्ला टाइफी, साल्मोनेल्ला पैराटाइफी, ए. शीजेल्ला, ई. कोलाई।*

2. जीवाणुजन्य खाद्य विषाक्तता

   1. टाक्सिक संक्रमण– साल्मोनेल्ला, *विब्रियो पैराहीमोलिटीकस, क्लॉस्ट्रीडियम परफ्रिनजेंस* टाइप सी।
   2. इनटाकीकेशंस या मादकता– *क्लॉस्ट्रीडियम बाटुलाईनम, क्लॉस्ट्रीडियम परफ्रिनजेंस* टाईप ए, स्टैफाइलोकोकसता।
   3. अविशिष्ट जीवाणु खाद्य विषाक्तता–*बैसलिस सीरियस, सीडोमोनास एरुजिनोसा*, प्रोटियस प्रजाति, प्लेसीमोनास और एरोमोनस।
   4. कवक विषाक्ततायें
   5. विषाणु संक्रमण – यकृतशोथ ए तथा मेरुरज्जुशोथ
   6. परजीवी संक्रमण

डा. सिंह ने सन् 1980 के दशक में आघटित अपेक्षाकृत नये रोग कैम्पाईलोबैक्टीरियता पर चर्चा की। इस रुग्णता का आघटन बांग्लादेश, इंडोनेशिया, श्रीलंका तथा भारत में होता पाया गया जिसमें जंतर–आंत्रशोथ प्रमुख लक्षण था। इसका आघटन बच्चों में अधिक होता है। दस्तग्रस्त कुत्तों में रोग कारक जीवाणु अधिक पाया गया। इसी प्रकार बाजार में उपलब्ध मुर्गे अत्याधिक जीवाणुवाहक पाये। कुक्कुट मल से पृथक्कीकृत *कैम्पाइलोबेक्टर जेजुनाई* का जैव प्रकार–2 अत्याधिक था। वधशाला की फर्श व दीवार में इस जीवाणु की बहुतायत थी हालाँकि थोक मांस विक्रेताओं के नमूने जीवाणुरहित पाये गये। आपने इन रोगों के बचाव तथा नियंत्रण के उपायों पर भी चर्चा की।

संदर्भ– **सिंह, सी.एम. (1985) फूडबोर्न डिसीजेस इन इंडिया। डा. बी. सी. दासगुप्ता मेमोरियल ओरेशन डेलीवर्ड एट टवेंटीनाइंथ कांफ्रेस ऑफ इंडियन पबलिक हेल्थ एशोसियेशन ऑन फरवरी 8, 1985 एट नागरकोइल, कन्याकुमारी, तमिलनाडु।**

यह रुचिकर विषय है कि हाल के वर्षों में जैव–चिकित्सा विज्ञान में परमाणु जीव विज्ञान द्वारा मुख्य उपलब्धियां व्यवहारिक जैव–प्रौद्योगिकी से आयी हैं।

पशु–चिकित्सा विज्ञान से सम्बंधित अनेक खोजों ने इस क्षेत्र की प्रगति को अग्रिम मोर्चे पर ला दिया है। पशु–चिकित्साविदों का उत्तरदायित्व विचारणीय है क्योंकि इन खोजों (औषधि हों अथवा टीका) को प्रथमतया पशुओं में परीक्षण करना होगा चाहे ये उत्पादों अथवा आहार के रुप में दी जाती हों।

जैव–प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में ओ एन बी एस, इ टी टी एवं एम ओ ई टी पशु उत्पादन में क्रांतिकारी परिवर्तन लाये हैं। जिन अन्य क्षेत्रों में लाभ पहुंचा है– वे हैं रोग निदान (हाईब्रिडोमा, मोनोक्लोनल, डी एन ए प्रोब्स), बचाव (उप–एकल टीका, रिकम्बीनेंट टीका), पोषण (प्रोबायोटिक्स, रोमंथी सूक्ष्मजीवाणु मैनीपुलेशन), भैषज्य विज्ञान (ऊतक सम्वर्धन से इन्सुलिन, लक्ष्य ओरियेटेड औषध), आनुवंशिकी (रेस्ट्रिक्टेड फ्रेगमेंट लेंथ पालीमार्फिज्म) इत्यादि।

पाठकों को **रिवियू आफ आफिस आफ इन्टरनेशनल डेस इपीजूटिक्स (ओ आई ई अंक 9 (संख्या 3),1990** में निम्नलिखित संदर्भित लेख पढ़ने हेतु आमंत्रित किया जाता है –

- यूटीलाइजेशन ऑफ कंट्रोल आफ बायोटेकनोलोजिकल प्रोसीडर्स इन वेट्रनरी साइंस।
- रेग्युलेटरी आस्पेक्टस आफ बायोटेकनोलोजी इन यूनाइटेड स्टेटस एंड कनाडा।
- रेग्युलेटरी आस्पेक्टस आफ बायोटेकनोलोजी इन यूरोप विथ पर्टीकुलर रेफरेंस टू वेट्रनरी साइंस रेग्यूलेशन इन एशिया एंड ओसियाना।
- डायग्नोसिस आफ वाइरल एंड बैक्टीरियल डिसीजेस।
- डायग्नोसिस आफ पैरासिटिक डिसीजेस।

- बायोटेकनोलोजी एंड वेटरनरी साइंस प्रोडक्शन आफ वेट्रनरी वैक्सीन।
- प्रोपेगेशन आफ इम्प्रूवड ब्रीडस: द रोल आफ आर्ट्रीफीशियल इनसेमीनेशन एंड इम्ब्रीयोट्रांसफर।
- रिप्रोडक्टिव टेक्नोलोजी इन एनीमल प्रोडक्शन।
- द पोटेनशियल आफ ट्रांसजेनिक एनीमल्स फार इम्प्रूवड एग्रीकल्चर प्रोडक्टीविटी।

इन सभी क्षत्रों में पशु–चिकित्साविदों के लिये प्रशिक्षण की नितांत आवश्यकता है ताकि उच्च किस्म की व्यवसायिक सिद्धहस्तता तथा चार्तुय प्राप्त हो सके और पशु–चिकित्सा विज्ञान सर्वोच्च विशेषज्ञता अवस्था में प्रवेश कर सके। ऐसी विधियां कदाचित ही एक विषय से उत्पन्न होती हैं अथवा एक अविष्कार से प्राप्त होती हैं। वास्तव में ये अनेकों ऐसे अविष्कारों के एक साथ उपयोग करने से विशिष्ट समस्या का हल प्रस्तुत करती हैं।

इस बात की महती आवश्यकता है कि विशिष्ट समस्याओं पर पशु शरीरक्रिया विज्ञानी, पशु–चिकित्साविद्, जीव–रसायनविद्, पशु आनुवांशिकविद्, पशु प्रजनक, मादा पशु रोग वैज्ञानिक, पशु स्वास्थ्य विशेषज्ञ, नैदानिक तथा शल्य चिकित्सक की सम्मिलित विशेषज्ञता द्वारा प्रयास हो। उस अदृश्य या साहसिक कार्य या वेंचर तक पहुँचने का एक यही वैज्ञानिक पथ होगा। ऐसे महत्वाकांक्षी अदृश्य (वेंचर) की शोध में जहाँ किसी एक ने 'सर्वज्ञाता' बनने का प्रयास किया है वह कुछ भी प्रारंभ न कर सका अथवा लम्बे चौड़े दावे के बाद लाभदायक परिणाम नहीं दे सका है। यह बात भलीभांति समझ ली जानी चाहिये कि प्रारंभिक अवस्था में प्रायोगिक पशुओं की, समुचित कालांतर में जांच की जानी चाहिए, स्वच्छता से देखभाल, वैज्ञानिक विधि से मानीटिरिंग, वृहत परीक्षण किये जाने चाहिये एवं सिद्धि के साथ पाले जाने चाहिये। जैव–प्रौद्योगिकी को यदि ठीक प्रकार से प्रयुक्त किया गया तो इसका भविष्य (या स्कोप) असीमित है और यदि इसको त्रुटिपूर्ण उपयोग किया गया तो यह हानिदायक है। यह एक ऐसा सिद्धान्त है जो कि उच्च आर्थिक व्यय, उच्च तकनीकी प्रयोगशाला तथा अत्यन्त सावधानीपूर्वक उपयोग मांगता है। यह जनता के करोड़ों रुपयों को व्यय करने वाला एक

दुःसाहस सिद्ध हो सकता है जिस से नयी समस्यायें उत्पन्न हो सकती हैं तथा उद्देश्य अप्राप्य रह सकते हैं।

संदर्भ– सिंह, सी.एम. (1985) फूडबोर्न डिसीजेस इन इंडिया। डा.बी. सी. दासगुप्ता मेमोरियल ओरेशन। डिलीवर्ड एट टवेंटीनाइंथ कांफ्रेस ऑफ इंडियन पब्लिक हेल्थ एसोसियेशन ऑन फरवरी 8, 1985 एट नागरकोइल, कन्याकुमारी, तमिलनाडु।

कुछ उदीयमान एवं विदेशज पशुरोग : एक राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय परिदृश्य

पिछले चार दशकों में पशुओं तथा कुक्कुटों में अनेक उदीयमान (emerging) रोगों ने भारत में प्रविष्टी पायी, इनका निदान किया गया तथा स्थापित हुये यथा निलर्सना, संक्रामक गोपशु नासा प्रणालशोथ (आई बी आर), पैराइन्फ्लूयेंजा–III, गोपशु ल्यूकोसिस, संक्रामक श्वसनीशोथ (आई बी), संक्रामक स्वरयंत्र प्रणालशोथ (आई एल टी), पक्षीय मस्तिष्क सुषुम्नाशोथ (ए ई), मैरेक्सरोग (एम डी), एग ड्राप सिनड्रोम (ई डी एस), संक्रामक बर्साशोथ (आई बी डी), पक्षीय माइकोप्लाजमता, अश्वीय इन्फ्लुएंजा, अश्वीय संक्रामक अरक्तंता, अश्वीय प्रमस्तिष्क एक्जेंथीमा संदिग्ध रोगी इत्यादि।

कुछ विदेशज (exotic) पशु रोग भारत सहित विकासशील देशो के पशुधन के लिये अधिक खतरा सिद्ध हो सकते हैं। इनका अध्ययन अत्याधिक जटिल पी3 से पी5 स्तर की उच्च सुरक्षा पशुरोग प्रयोगशाला इत्यादि में ही किया जा सकता है।

भारत के लिये कुछ महत्वपूर्ण पशुरोग अफ्रीकी शूकर ज्वर, शूकर और गोपशुओं का वेसीकुलर (जलस्फोटीय) रोग, एजस्कीस रोग, पोरसाइन पार्वो विषाणु, खुरपका और मुहँपका रोग की अफ्रीकी स्ट्रेंस, सैट–1, सैट–2, सैट–3, गोपशु विषाणु दस्त (बी वी डी) म्यूकोसल रोग, काम्पलेक्स, लम्पी त्वचा रोग, लाऊपिंग रुग्णता, गोपशु स्पांजीफार्म मस्तिष्क रुग्णता, इब्रास्की रोग तथा गोपशु का जेमब्रान रोग, निलर्सना विषाणु रोग के कुछ स्ट्रेंस, पेस्टिस डेस पेटिट रुयूमीनेंट्स (पी पी आर), भेड़ों में रिफ्ट वैली ज्वर, बकरियों में अंजः संधिशोथ मस्तिष्कशोथ (लेंटी विषाणु संक्रमण), संक्रामक अश्वीय गर्भाशयशोथ (सी ई एम–77), कुक्कुट प्लेग, बत्तख विषाणु यकृतशोथ,

मानव तथा कुक्कुट में रेटीकुलोइंडोथीलियोसिस, शशकों में हीमरेजिक रोग इत्यादि हैं। इनमें से अनेक रोग भारत के पड़ोसी तथा अन्य देशों में आघटित होते हैं।

सन् 1967 में इटली से अफ्रीकी शूकर ज्वर का उन्मूलन एक लाख शूकरों का वध करके किया जा सका जिसकी कीमत पचास लाख अमरीकी डालर आंकी गयी। क्यूबा ने अफ्रीकी शूकर ज्वर का उन्मूलन करने के लिये चार लाख शूकरों का वध किया। अफ्रीकी शूकर ज्वर से मुक्ति पाने के लिये डोमीनिकन गणराज्य ने दस लाख शूकरों का बलिदान किया। ब्राजील में यह रोग 1978 में आया तथा इसके नियंत्रण अभियान पर दो माह में 30 करोड़ डालर व्यय हुये। माल्टा ने शूकर ज्वर उन्मूलन के लिये अपने समस्त शूकरों को नष्ट किया। हैती ने 3,84,000 शूकरों का वध किया तथा मात्र अफ्रीकी शूकर ज्वर के आगमन पर क्षतिपूर्ति या मुआवजा के लिये 9,548,860 डालर का भुगतान किया। जाम्बिया के लुसाका शहर में 1993 में पशु-चिकित्सा अधिकारियों ने त्वरित अभियान में हजारों शूकरों को गोली मारी, जलाया तथा दफनाया। लुसाका के 15 किमी. अर्धव्यास में समस्त शूकरों को गोली मारकर नष्ट किया गया।

इंडोनेशिया में सन् 1964 में जैमब्रान रोग आघटित हुआ जिससे तीन वर्षो में 60,000 गौवंशीय तथा भैंसों की मृत्यु हुई। इंडोनेशिया तथा थाईदेश में इब्रास्की रोग का आघटन होता है।

निलर्सना के 1-7 प्रतिशत प्रतिकारक के परिणामस्वरुप सन् 1977 में विश्व के अनेक देशों ने आस्ट्रेलिया से पशु एवं पशु उत्पादों यथा मांस, ऊन, वीर्य तथा चमड़ो (हाईडस) के आयात पर रोक लगा दी जिससे वहां के विदेशी व्यापार को बहुत अधिक हानि हुई। आस्ट्रेलिया की सीमित कुक्कुट आबादी में, फाऊल प्लेग के प्रकोप के उन्मूलन की कीमत लगभग एक करोड़ डालर आयी।

इंग्लैण्ड की भेड़ों में स्क्रेपी तथा मानव के कुरु रोग की तरह का एक धीमा विषाणु गोपशु स्पांजीफार्म मस्तिष्क रुग्णता (बी एस ई) गायों में एक प्रमुख समस्या बन गया है। इससे सन् 1987-89 के दौरान 2000 गौवंशीय पशु प्रभावित हुये थे तथा इस देश के समक्ष, इस रोग से मुक्त

अमेरिका तथा यूरोपीय आर्थिक समुदाय के देशों में गौवंशीय मांस आयात की प्रमुख समस्या उत्पन्न हो गयी थी। गायों में रोग का जनन कुछ गायों में गौप्राशन द्वारा हुआ जिस में स्क्रेपी जैसे रोगग्रस्त विषाणुयुक्त भेड़ों के चोकरौश (आफल्स) मिलाये गये थे। बी एस ई पृथकीकृत, भेंड़ों की पिछली ज्ञात स्क्रेपी की सभी 20 स्ट्रेंस से भिन्न हैं तथा चूहों में इस का उष्मायनकाल कम (116 दिन) है। बी एस ई भेड़ और बकरी में संचारित की गयी है। अमेरिका में बोवाईन इम्यूनोडेफीसियेंसी वाईरस (बी आई वी) प्रगामी दुर्बलता अवस्था उत्पन्न करता है। यह विषाणु पृथकीकृत किया गया तथा बी आई वी और एच आई वी के मध्य 'जीनोमिक' सम्बंध स्थापित किया गया। बी आई वी ग्रस्त गोपशु में प्रगमनीय ल्यूकोसाइटोसिस विकसित हुयी किंतु कोई नैदानिक लक्षण आलेखित नहीं किये गये हैं। एशिया, यूरोप तथा अमेरिका के कई देशों में विषाणु रक्तस्रावीय रोग से लाखों शशक कालग्रस्त हुये हैं। केवल इटली को 3.2 करोड़ शशकों की हानि हुयी थी। यह रुग्णता सन् 1988 में चीन से जहाज से आये हिमीकृत मांस द्वारा पहले मैक्सिको शहर तथा बाद में सम्पूर्ण अमेरिका में फैल गयी।

सन् 1960 से पूर्व भारत में दक्षिणी अफ्रीकी अश्व रुग्णता नहीं होती थी। सन् 1960-63 के मध्य इस रोग से 33,000 घोड़ों की मृत्यु के कारण बहुत अधिक आर्थिक हानि हुयी। समुद्रपार विदेशी प्रयोगशालाओं में रोग का सुनिश्चय हुआ तभी इसके नियंत्रण के उपाय किये जा सके। इसी प्रकार सन् साठ के प्रारंभ में शूकर ज्वर (हाग कालरा) के देश में प्रवेश के फलस्वरुप पर्याप्त् संख्या में सुअरों का नुकसान हुआ। भारत को अनुमानतः प्रतिवर्ष 5,100 करोड़ रुपये की क्षति खुरपका और मुंहपका से पशुओं की मृत्यु एवं अस्वस्थता से होती हैं। ये हानियां दुग्ध उत्पादन में कमी, पुनरुत्पादनीय एवं बोझा ढोने की क्षमता में ह्रास के कारण होती हैं। ये हानियां खुरपका और मुंहपका विषाणु की ए, ओ, सी और एशिया-1 स्ट्रेन से होती हैं। भारत में सैट-1, सैट-2 तथा सैट-3 एवं ए-24 उपप्रकार खुरपका एवं मुंहपका विषाणु नहीं पाये जाते हैं। खुरपका और मुंहपका विषाणु का ए-24 उपप्रकार 1989 में फिलीपाइंस तथा मध्यपूर्व में प्रकट हुआ है तथा यह कभी भी भारत में प्रविष्ट कर सकता है। ऐसा अनुमान है इससे 30 प्रतिशत अस्वस्थता दर और देश को बहुत आर्थिक हानि उठानी पड़ेगी। इसी प्रकार

इंडोनेशिया और थाईदेश में आघटित हो रहे इब्रास्की रोग तथा इंडोनेशिया का जैमब्रान रोग भारत में कभी भी प्रवेश कर सकता है।

पेस्टिस डेस पेटिटस रयूमीनैटस (पी पी आर) सीमित मात्रा में आईवरी कोस्ट, पूर्वी और केन्द्रीय अफ्रीका, मध्य सूडान, इथोपिया और अरब प्रायद्वीप में फैली है। रोग का दक्षिणी भारतीय राज्यों में होने का संदेह है। (नोट– वर्तमान समय में इस रोग का कहर/प्रकोप अधिकांश भारत में मच चुका है)।

बोवाइन वाइरल डायरिया (बी वी डी)/म्यूकोसल रोग काम्पलेक्स का सम्पूर्ण विश्व में वितरण है। गो प्रजाति पशुओं के अतिरिक्त बी वी डी वी भेड़ों, बकरी, सुअर, वन्य रोमन्थी पशुओं आदि में विविध नैदानिक लक्षणों सहित भी पायी जाती है। इस को भारत में अभी नहीं पहचाना गया है।

संदर्भ– सिंह, सी एम. (1985) फूडबोर्न डिसीजेस इन इंडिया। डा.बी. सी. दासगुप्ता मेमोरियल ओरेशन। डिलीवर्ड एट टवेंटीनाइंथ कांफ्रेस ऑफ इंडियन पबलिक हेल्थ एशोसियेशन ऑन फरवरी 8, 1985 एट नागरकोइल, कन्याकुमारी, तमिलनाडु।

इक्कीसवीं शताब्दी हेतु पशु चिकित्सा व्यवसाय में मानव संसाधन विकास:

डा. सिंह ने 16 अक्टूबर, 1994 को पूणे में कृषि विश्वविद्यालय स्नातकों की सभा में उपर्युक्त ज्वलंत विषय पर व्याख्यान दिया। उन्होंने कहा– समस्त विश्व ने 21वीं शताब्दी में प्रवेश करने के लिये कमर कस ली है। कुछ चिंतकों ने इस सम्बंध में सत्तर के दशक में कार्य करना प्रारंभ कर दिया था। अस्सी के दशक में अधिकांश विकसित देशों ने इस दिशा में अच्छी शुरुआत कर दी थी तथा प्रारंभिक तैयारियां भी कर ली थीं। आखिरकार यह एक रात्रि का कार्य नहीं था। संसाधन मूल्याकंन, मानव शक्ति अध्ययन, अग्रिम पंक्ति क्षेत्रों के विषयों का चयन, मूल्याकंन, अध्ययन, समस्यांग्रस्त क्षेत्रों को इंगित करना, प्राथमिकताओं की वरीयता एवं क्रमबद्धता का चयन करना, मानव संसाधन अनुमान, मानव संसाधन विकास कार्यान्वयन करने वाले तंत्र का मल्याकंन एवं मानीटिरिंग करना। यह श्रृंखला अनंत है। अपने लगभग 24

पृष्ठीय टंकित व्याख्यान में डा. सिंह ने निम्न लिखित ज्वलंत विषयों पर अपने विचार प्रकट किये–

I. पशु–चिकित्सा विज्ञान में पिछले दशकों में सामाजिक, वैज्ञानिक और व्यवसायिक विकास।

आप ने पिछले दशकों में पशु–चिकित्सा व्यवसाय के कई गुणा बढ़े उत्तरदायित्व के मूल दस तथ्यों की चर्चा करी। डा. सिंह ने पशु–चिकित्सा विज्ञान में जैव– प्रौद्योगिकी, ओ एन बी एस एवं एम ओ ई टी, भ्रूण प्रत्यारोपण के स्वास्थ्य सम्बंधी रेग्यूलेटरी क्षेत्रों तथा राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय परिपेक्ष्य में पशुओं के उदीयमान एवं विदेशज रोगों पर अपने विचार प्रकट किये।

II. उद्योग, निजी तथा स्वयंसेवी संगठनों से प्रत्यक्ष सम्बंधित क्षेत्रों एवं राज्य में पशु चिकित्सा/पशु पालन सेवाओं की क्रियाओं की स्थिति।

आपने भारतीय संदर्भ में पशु–चिकित्सा सेवा के अन्तर्गत पशु स्वास्थ्य देखभाल, रोगी पशुओं का उपचार, पशु एवं पक्षीशालाओं का गठन तथा प्रबंध (स्थूल एवं सूक्ष्म प्रबन्ध), पशु उत्पादों, पशु उप–उत्पादों का लवन एवं प्रसंस्करण, पशु वज्य पदार्थों का पुनर्चक्रण पशुओं से प्रसारित होने वाले रोगों से सर्वजन का बचाव आदि पर चर्चा की। मनुष्यों, पशुओं के लाभार्थ एवं जैव विविधता एवं पर्यावरण संरक्षण पर अतिरिक्त उत्तरदायित्व है।

आपने आर्थिक महत्व के क्षेत्रों और व्यवसायिक पशु उत्पादन तथा उदीयमान रोगों से हानि संबंधी विषयों पर अपने विचार प्रकट किये।

डा. सिंह में भारतीय पशु–चिकित्सा परिषद के प्रमुख उद्देश्यों, इसके समक्ष नये परिदृश्य एवं कार्यों, रेग्यूलेशन बनाने एवं पशु–चिकित्सा शिक्षा के विषय में समुचित जानकारी दी।

III. व्यवसाय की आवश्यकताओं एवं विकास की पूर्ति के लिये प्रारंभिक पशु–चिकित्सा शिक्षा।

इसके अन्तर्गत डा. सिंह ने भारतीय पशु–चिकित्सा परिषद रेग्यूलेशन 1993 का उल्लेख किया। पशु–चिकित्सा शिक्षा स्नातक कार्यक्रम बी वी

एस–सी एंड ए एच का न्यूनतम मानक (संदर्भ– भारत का असाधारण गजट–असाधारण भाग–II– अनुभाग–3 उपअनुभाग (1) दिनाँक फरवरी 7,1994) सन् 1994–95 से लागू किया गया है ताकि 1999–2000 से पशु–चिकित्सा स्नातक भारतीय विश्वविद्यालयों से मान्यता प्राप्त पशु–चिकित्सा योग्यताओं सहित आयें तथा 21वीं शताब्दी की व्यवसायिक चुनौतियों का समरुपता से सामना कर सकें। डा. सिंह ने पशु–चिकित्सा रेग्यूलेशन की 12 प्रमुख बातें सूचीबद्ध कीं।

IV. व्यवसायिक क्षमता विकास और समाज की विकास आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु व्यवसायिक सेवा और उच्च पशु–चिकित्सा शिक्षा हेतु आपेक्षित संशोधन।

अग्रिम क्षेत्रों में उच्च व्यवसायिक योग्यताओं युक्त मानव संसाधन की आवश्यकता और उच्च व्यवसायिक (पशु–चिकित्सा) शिक्षा पर डा. सिंह ने प्रकाश डाला। आपने स्नातकोत्तर डिप्लोमा, विशिष्ट (कैडर) परीक्षण, निरंतर पशु–चिकित्सा शिक्षा (सी.वी.ई.), लघु कार्यक्रमों के अन्तर्गत प्रस्तावित विविध विषयों की जानकारी प्रदत्त की। इसी क्रम में आपने व्यवसायिक डाक्टरल कार्यक्रम तथा पोस्ट डाक्टरल सर्वोच्च विशिष्टता विषयक जानकारी दी।

अपने व्याख्यान के अंत में डा. सिंह ने महाराष्ट्र राज्य के लिये एक कार्य योजना सुझायी। इसके अन्तर्गत महाराष्ट्र को देश के उन राज्यों में बताया गया जहाँ प्रथम बहुआयामी चिकित्सालयों (पालीक्लिनिक) का सिद्धान्त प्रविष्ट हुआ। आपने कहा प्रत्येक जिले में पालीक्लिनिक 'वेट्रनरी सेन्टर' या 'पशु ज्ञान केन्द्र' जैसे उच्च विशेषज्ञों के स्तर तक सुसज्जित किया जाये जिनमें सात स्वास्थ्य तथा इतने ही उत्पादन विषयों के विशेषज्ञ सुलभ हों। इस प्रकार की सुविधायें 24 घंटे उपलब्ध होनी चाहिये जबकि अभी ये एक पाली (अर्थात् 8 घंटे) में भी सुलभ नहीं है। आपने पशु उद्योग, जैविक पशु–चिकित्सा उत्पादों, पिछवाड़े के फार्मो की सूक्ष्म अर्थव्यवस्था, सूखे से निपटने, प्रतिबलों की चुनौती सामना करने एवं पशु कल्याण विषयों का भी उल्लेख किया।

सिंह, सी. एम. (1994) ह्यूमन रिर्सोस डेवलपमेंट इन वेट्रनरी प्रोफेशन फार 21फर्स्ट सेंचुरी डिलीवर्ड एट कंवेंशन ऑफ एग्रीकल्चरल यूनीवर्सिटी ग्रेजुऐटस हेल्ड आन 16 अक्टूबर एट भूमाता, पूणे, महाराष्ट्र।

भारतीय पशु–चिकित्सा परिषद्

भारतीय पशु–चिकित्सा परिषद् ने अल्पकाल में निम्नलिखित पांच रेग्यूलेशंस बनाये हैं जिनकी कानूनी तथा अन्य आवश्यक औपचारिकतायें पूर्ण करवाने के पश्चात् भारतीय पशु–चिकित्सा परिषद् अधिनियम, 1984 के अंडर सेक्शन 66 के अन्तर्गत भारत सरकार से संस्तुत कराया है। परिषद ने इन्हें गजट में प्रकाशित भी करवाया है–

- भारतीय पशु–चिकित्सा परिषद–(सामान्य) नियम (रेग्यूलेशंस), 1991, भारत के असाधारण गजट संख्या 425 दिनांक 18 नवम्बर, 1991 में भाग–II अनुभाग (3) के उप अनुभाग (i) में सूचीकृत ।
- भारतीय पशु–चिकित्सा परिषद– (निरीक्षक तथा आगन्तुक) रेग्यूलेशंस, 1991, भारत के असाधारण गजट संख्या 412 दिनांक 12 नवम्बर, 1991 में भाग–II अनुभाग (3) के उप अनुभाग (i) में सूचीकृत ।
- भारतीय पशु–चिकित्सा परिषद– (पंजीकरण) रेग्यूलेशंस, 1991 भारत के असाधारण गजट संख्या ( ) 24 फरवरी, 1992 में भाग–II अनुभाग (3) के उप अनुभाग (i) में सूचीकृत ।
- भारतीय पशु–चिकित्सा परिषद– (व्यवसायिक व्यवहार के मानक, सदाचार तथा नीतिशास्त्र की संहिता, रेग्यूलेशंस, 1992 (भारत के असाधारण गजट संख्या 154 दिनांक 1 अप्रैल, 1993, में भाग–II अनुभाग (3) के उप अनुभाग (i) में सूचीकृत ।
- भारतीय पशु–चिकित्सा परिषद– (शुल्क तथा भत्ते) रेग्यूलेशंस, 1992 भारत के असाधारण गजट संख्या 153 दिनांक 1 अप्रैल, 1993 में भाग–II अनुभाग (3) के उप अनुभाग (i) में सूचीकृत ।

(अ) भारतीय पशु–चिकित्सा परिषद् द्वारा मान्यताप्राप्त पशु–चिकित्सा संस्थानों अथवा सहयोगी संस्थानों में निम्नलिखित विषयों में 8–12 सप्ताहों के विशिष्ट प्रौद्योगिकी कार्यक्रम (एस टी सी) प्रारंभ किये जाने चाहिये–

1. आहार निर्माण
2. आहार प्रौद्योगिकी
3. आहार विश्लेषण
4. कृत्रिम गर्भाधान
5. भ्रूण प्रत्यारोपण प्रौद्योगिकी
6. नैदानिक जीव रसायन
7. कम्प्यूटर की सहायता से आँकड़ा हैंडलिंग
8. वन्य पशु रोग
9. प्राणी एवं वन्यपशुओं का रसायनिक नियंत्रण (restrain)
10. रोग निगरानी
11. वधशाला प्रबन्ध
12. वधशाला गृह और पशु उप–उत्पाद प्रौद्योगिकी
13. मांस प्रसंस्करण प्रौद्योगिकी
14. कुक्कुट प्रसंस्करण प्रौद्योगिकी
15. मांस स्वच्छता विज्ञान
16. दुग्ध स्वच्छता विज्ञान
17. पशु–चिकित्सा औषध विज्ञान नैदानिक प्रौद्योगिकी
18. नैदानिक परजीवी विज्ञान
19. कुक्कुट विकृति विज्ञान
20. औषध एवं कीटनाशक आमापन

21. रेबीज नियंत्रण
22. ब्रूसेल्लता नियंत्रण
23. संचार प्रौद्योगिकी
24. पशु–चिकित्सा अन्वेषण हेतु व्यवहारिक प्रतिरक्षा विज्ञान
25. संज्ञाहरण विज्ञान
26. रोमान्थी शल्य विज्ञान
27. लघु पशु शल्य विज्ञान
28. नैदानिक विकिरण विज्ञान
29. रोमान्थी औषधि विज्ञान
30. मादा रोग विज्ञानी प्रैक्टिस
31. प्रसूति विज्ञान प्रैक्टिस
32. पालतू पशु प्रैक्टिस
33. पशु–चिकित्सा अर्थशास्त्र
34. पशु–चिकित्सा सेवा प्रबन्ध
35. परियोजना एवं मानव संसाधन नियोजन
36. पशु–चिकित्सा त्वक् विज्ञान
37. क्षयरोग नियंत्रण
38. व्यवसायिक हैचरी उत्पादन और प्रबन्ध
39. व्यवसायिक ब्रोइलर उत्पादन और प्रबन्ध
40. व्यवसायिक लेयर उत्पादन और प्रबन्ध
41. व्यवसायिक बत्तख उत्पादन और प्रबन्ध
42. व्यवसायिक बटेर उत्पादन और प्रबन्ध
43. व्यवसायिक टर्की उत्पादन और प्रबन्ध

44. आर्थिक सूकर उत्पादन और प्रबन्ध

45. आर्थिक डेयरी उत्पादन और प्रबन्ध

46. पशु-चिकित्सा स्वभाविकी एवं पशु कल्याण

47. पशु-धन आकस्मिक रोग नियंत्रण एवं बचाव

(ब) लघुकालीन कार्यक्रम – तकनीकी क्षमता विकास कार्यक्रम पर 2–4 सप्ताहों के लघुकालीन कार्यक्रम निम्नलिखित क्षेत्रों में प्राशिक्षण प्रदान कर सकते हैं–

1. रोमान्थिक औषध विज्ञान
2. क्रांतिक रोगियों में द्रव तथा इलेक्ट्रोलाइट उपचार
3. थनैला नियंत्रण और वर्तमान उपचार
4. पशु–चिकित्सा रोगियों में इंडोस्कोपी
5. इलेक्ट्रोकार्डियोग्राफिक निदान
6. नेत्रांतदर्शन
7. ऊतक जैव ऊति परीक्षा विधियां
8. क्रांतिक रोगी पशुओं (छोटे पशुओं) को पुनरुज्जीवन
9. क्रांतिक रोगी पशुओं (बड़े पशुओं) को पुनरुज्जीवन
10. बड़े पशुओं में अस्थिभंग का स्थिरीकरण तथा प्रारंभिक देखभाल
11. छोटे पशुओं में अस्थिभंग का स्थिरीकरण तथा प्रारंभिक देखभाल
12. नर रोमांथियो में मूत्रमार्ग छिद्रीकरण
13. छोटे पशुओं में रोमान्थिका छिद्रीकरण लेप्रोस्कोपी (अतरुदरदर्शन)

14. बड़े पशुओं में रोमान्थिका छिद्रीकरण लेप्रोस्कोपी (अतरुदरदर्शन)
15. फार्म पशुओं में वन्ध्यता
16. छोटे पशुओं में अपोहन या डायालीसिस
17. बड़े पशुओं में अपोहन या डायालीसिस
18. अपशल्कन कोशिका विज्ञान
19. फार्म पशुओं में गर्भाशय भ्रंश का उपचार
20. मरणोपरांत विधियां एवं नमूना प्रेषण
21. जीवाणु और विषाणु रोगों में 'किटों' (Kits) का उपयोग
22. प्रोटोजोआ रोगों और विषाणु रोगों में 'किटों' (Kits) का उपयोग
23. त्वचा रोगों का आधुनिक उपचार
24. जैविक पदार्थों का हस्तकरण (हैडलिंग) नियम और विधान
25. पशु–चिकित्सा व्यवसाय तथा पशु आधारित गतिविधियों में पशु कल्याण
26. मछली एवं मछली खोल रोग और विषाक्ततायें
27. पशु चिकित्सा सूचना एवं संचार का हस्तांकरण

3. व्यवसायिक डाक्टरल कार्यक्रम तथा स्नातकोत्तर सर्वोच्च विशेषज्ञता–

वर्तमान समय में पशु–चिकित्सा विज्ञान में कोई व्यवसायिक डाक्टरल उपाधि नहीं है। अधिकतर पशु–चिकित्सा संस्थानों में अमेरिकी उच्च शिक्षा पद्धति के अनुसार द्वि–स्तरीय स्नातकोत्तरीय कार्यक्रम–एम.वी.एस–सी. तथा पी.एच–डी. उपाधियां प्रदान की जाती हैं। गुयेल्फ विश्वविद्यालय, कनाडा ने पशु–चिकित्सा स्नातकों के लिये तीन वर्षीय डी.वी.एस–सी. उपाधि प्रदान करने वाला एक व्यवसायिक कार्यक्रम का मूल उद्देश्य प्रशिक्षण प्राप्त करने वाले हाथों को श्रेष्ठ व्यवसायिक क्षमता प्रदान करना है। भारतीय चिकित्सा

परिषद की भांति भारतीय पशु–चिकित्सा परिषद का ध्येय है कि एक व्यवसायिक कार्यक्रम विकसित हो जिसमें रेसीडेंसी/ट्यूटर–डिमांस्ट्रेरशिप/ अध्यापन सहायता का प्रावधान हो।

अध्याय – दस

मान, सम्मान एवं प्रशस्ति पत्र

पशु–चिकित्सा विज्ञान में पचास वर्षों तक उत्कृष्ठ योगदान हेतु डा. सिंह को मान, सम्मान, पुरस्कारों तथा प्रशस्ति पत्रों की झड़ी लगी रही। भारत के चार विश्वविद्यालयों (दो कृषि तथा दो पशु-चिकित्सा विज्ञान) ने उन्हें डी एस-सी की मानद उपाधि से सम्मानित किया। अब तक किसी भी भारतीय पशु-चिकित्सा विद् को इतनी मानद उपाधियां प्रदत्त नहीं हुयीं हैं। भारतीय पशु-चिकित्सा विज्ञान अकादमी, नई दिल्ली ने आप को अपना फेलो चुना तथा एफ एन वी एस-सी की उपाधि प्रदान किया। समय-समय पर अनेक पशु-चिकित्सा विज्ञान सोसाइटियों ने डा. सिंह फेलोशिप तथा मान, सम्मान एवं प्रशस्ति पत्र प्रदान किये। कुछ के पाठ्य यहाँ उद्धृत हैं–

Chandra Shekhar Azad University of Agriculture and Technology, Kanpur

Mr. Chancellor,

I have great pleasure in presenting to you, Sir, Dr. Chinta Mani Singh, Director of the Indian Veterinary Research Institute and an acknowledged authority in the field of Animal Science and Veterinary Education. Dr. Singh has to his credit more than a hundred papers of original research in the subjects of Pathology, Bacteriology and Virology which have been published in the journals of National and International repute. He has nearly forty notable findings in the above and allied fields which have been recorded for the first time in India and acclaimed the world over. He has been associated in reporting new species of half a dozen bacteria which are known as Salmonella-Goverdhan, Mathura, Vrindaban, Gokul and Brijbhumi for the first time in the world. The important pathogenic microbe of man, animals and plants known today as the Mycoplasma was also reported for the first time in India under his guidance.

Healthy livestock is essential to agricultural economy for country like India where complete mechanization of agriculture is neither feasible nor in keeping with its ancient heritage. Dr. Singh's contribution in reporting detailed studies of such deadly have been

the mile stones in the field of animal health. Only researches like the one to which Dr. Singh is devoted can help us in the development of country's animal production.

Dr. Singh has widely traveled abroad and has participated in several International Seminars and Symposia. He has also served as an expert member of the Indian delegation to Tanzania. In recognition of his scientific contribution and standing, he was elected as President of six Indian Scientific Societies. He has been invited several times by the FAO as Consultant and as Discussion Leader in International Scientific Meetings and advisor for Project Evaluation Expert Committees of the WHO.

Dr. Singh's contribution in the reorganisation and development of the Indian Veterinary Research Institute has been commendable. As the Director of this National Institute for the last 16 years he has the distinction of raising it to the standard of any international institute of the world by establishing many new divisions and two independent National Institute of Research, one at Farah (Mathura) for Goats and the other at Izatnagar for Poultry.

Dr. Singh while at Punjab Agriculture University was responsible for the development and organisation of graduate and post-graduate veterinary education and research in the initial stages of combined Agriculture Universities of Punjab and Haryana. Dr. Singh has been closely associated with our Mathura Campus for a long time and has greatly contributed to the reorganisation and development of post-graduate veterinary education. It was due to his efforts that post-graduate teaching and research at the University level was organised for the first time in Veterinary Science in the country at Mathura. By placing his name in the roster of the graduates, this University pays a tribute to his attainment in Veterinary Science and in helping the development of our Mathura Campus.

Mr. Chancellor, I pray that you may be pleased to confer upon Dr. Chinta Mani Singh, the degree of **Doctor of Science (Honoris Causa)**.

Kanpur
May 2,1982

B.R. Agarwal
Vice Chancellor

AWARD OF DOCTOR OF SCIENCE (HONORIS CAUSA) TO DR C. M. SINGH BY IVRI, IZATNAGAR, UP ON 9th DECEMBER,1990

SCROLL OF HONOUR

A colossus on the veterinary scene in India. Dr. C.M. Singh born in an agricultural family in 1922, graduated from Bihar Veterinary College. Dr. Singh obtained his M.S. and Ph.D. from Michigan State University and had a post doctoral stint at Cornell University.

Starting from grass roots, Dr. Singh rose to dizzy heights in veterinary research, teaching and research management with single minded dedication. During his illustrious career, several onerous responsibilities like Professor and Dean in Agricultural Universities at rather lightly on his shoulders and he produced noted veterinarians and valued scientific results. The watershed year was perhaps 1966, when at 44, Dr. Singh became the youngest Director of Indian Veterinary Research Institute, and during the next decade and a half, he had diversified the scope, reach and depth in veterinary research and education by creating several new specialties involving multi-disciplinary approach; and in 1982, when he laid down the office on superannuation, IVRI, declared a Deemed University soon after , stood a glowing testimony to his great vision and dynamism in enlarging the frontiers of veterinary research and education in the country. His contributions in reporting new Salmonella serotypes, Mycoplasma in poultry and Bovine Lymphosarcoma in Indian buffaloes stand out for special mention.

Awards, honours etc., came his way as a matter of course during his glorious career, including Doctor of Science (Honoris Causa) from CSA University of Agriculture and Technology, Kanpur.

In recognition of his outstanding contributions in veterinary research and education, Indian Veterinary Research Institute deems it a great honour to confer on **Dr. C.M. Singh** the degree of **Doctor of Science (Honoris Causa)**, on the ninth day of December, 1990.

SOCIETY FOR IMMUNOLOGY AND IMMUNOPATHOLOGY

Life Time Achievement Award

to Prof. C.M. Singh on the occasion of his 75th Birth Year

A colossus on the veterinary scene in India, Dr. C.M. Singh born an agricultural family in 1922, graduated from Bihar Veterinary College. Dr. Singh obtained his M.S. and Ph. D. from Michigan State University and had a post doctoral stint at Cornell University, USA.

Starting from grass roots, Dr. Singh rose to dizzy heights in veterinary research, teaching and research management with single minded dedication. During his illustrious career, several onerous responsibilities like Professor and Dean in Agricultural Universities at rather lightly on his shoulders and he produced noted veterinarians and valued scientific results. The watershed year was perhaps 1966, when at 44, Dr. Singh became the youngest Director of Indian Veterinary Research Institute, and during the next decade and a half, he had diversified the scope, reach and depth in veterinary research and education by creating several new specialties involving multi disciplinary approach and in 1982, when he laid down the office on superannuation, IVRI was declared a Deemed University soon after. He stood a glowing testimony to his great vision and dynamism in enlarging the frontiers of veterinary research and education in the country. His contributions in reporting new Salmonella serotypes, Mycoplasma in poultry and Bovine Lymphosarcoma in Indian buffaloes stand out for special mention. Even after 16 years of retirement he is actively involved in academic as President of Veterinary Council of India as well as National Academy of Veterinary Sciences.

Awards, honours, etc., came his way as a matter of course during his glorious career, including Doctor of Science (Honoris Causa) from CSA University of Agriculture and Technology, Kanpur, Deemed university IVRI, Izatnagar and G.B. Pant University of Agriculture and Technology, Panatnagar.

In recognition of his outstanding contributions in veterinary research, education and policy decisions, Society for Immunology & Immunopathology deems its great honour to confer on Dr. C.M. Singh the " Life Time Achievement Award" on the 3rd day of November, 1998.

Prof. Ramesh Kumar
President

Dr. R.S. Chauhan
Secretary-General

West Bengal University of Animal and Fishery Sciences

First Convocation 1999
Conferment of Degree
Doctor of Science (Honoris Causa)

Citation

Dr. Chinta Mani Singh, President, Veterinary Council of India Ex-Director; Indian Veterinary Research Institute, Consultant with FAO and WHO, is an academician and pioneering investigator in buffalo lymphosarcoma, poultry mycoplasma and many other emerging diseases of animals, wining laurels and contributing immensely for broadening the frontiers of Veterinary research and education in the country. Out of his more than 100 research publication, 40 were recorded for the first time in India. He had the privilege of being the member on the Advisory Board of WHO for Zoonotic diseases in the global scenario. He attended and chaired innumerable national international seminars and conferences contributing his might towards the development of Veterinary Science and Technology. He is widely traveled and has served in more than dozen countries. For his national and international contributions towards Veterinary Public Health and Livestock Development, he has conferred with the degrees of Doctor of Science (Honoris Causa) by several Universities. As President of Veterinary Council of India , his contribution towards the improvement of standard of Veterinary education and sustainable growth of the Profession is of high order. West Bengal University of Animal & Fishery Sciences deems it a great honour to confer on Dr. C.M. Singh, the degree of Doctor of Science (Honoris Causa) on the 25th day of February, 1999.

गोविन्द बल्लभ पंत कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय पन्तनगर

डा. चिंतामणि सिंह को
विज्ञान वारिधि (डाक्टर आफ साइंस) की
मानद उपाधि प्रदान करने के निमित्त
प्रशस्ति-पत्र
21 जून, 1997

माननीय कुलाधिपति महोदय,

राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर अर्जित ज्ञान तथा अनुभव द्वारा देश में पशु-चिकित्सा विषयक शिक्षा, अनुसंधान तथा प्रसार को नये आयाम देकर और पशुधन विकास कार्यक्रमों के विस्तार में उत्कृष्ट कार्य करके, इस विश्वविद्यालय के उद्देश्यों की पूर्ति में विशिष्ट योगदान हेतु मैं डा. चिंतामणि सिंह को विज्ञान वारिधि की मानद उपाधि से सम्मानित करने के लिए आपके सम्मुख प्रस्तुत करता हूँ।

डा. सिंह का जन्म 30 नवम्बर, 1922 को जिला जौनपुर, उत्तर प्रदेश में हुआ था। आपने पशु-चिकित्सा विज्ञान की स्नातक उपाधि पटना के बिहार पशु-चिकित्सा महाविद्यालय से सम्मान सहित प्राप्त की। आपने मास्टर तथा पी-एच. डी. की उपाधियाँ अमेरिका के मिशीगन स्टेट विश्वविद्यालय से प्राप्त कीं।

अल्प समय के लिये कार्नेल विश्वविद्यालय में पोस्ट डाक्टरल फेलो के रुप में कार्य करने के उपरान्त, डा. सिंह भारत लौट आए तथा आपने मथुरा के पशु-चिकित्सा एवं पशुपालन महाविद्यालय के जीवाणुविज्ञान एवं विकृतिविज्ञान विभाग में प्राध्यापक तथा अध्यक्ष का पदभार ग्रहण किया। बाद में आपने इसी महाविद्यालय में संकाय के अधिष्ठाता के पद पर भी कार्य किया। वर्ष 1964 से 66 के बीच आप पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, हिसार के पशु-चिकित्सा विज्ञान महाविद्यालय के अधिष्ठाता पद पर कार्यरत रहे। वर्ष 1966 में आपने भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के अन्तर्गत भारतीय पशु-चिकित्सा अनुसंधान संस्थान के निदेशक का पदभार ग्रहण किया और

इस संस्था में अनुसंधान, शिक्षण एवं प्रसार कार्यो के बहुआयामी विकास में योगदान दिया। आपके प्रयासों के फलस्वरुप ही भारतीय पशु-चिकित्सा अनुसंधान संस्थान को 'डीम्ड' विश्वविद्यालय, का दर्जा प्राप्त हुआ। 1982 में भारतीय पशु-चिकित्सा अनुसंधान संस्थान के निदेशक पद से अवकाश प्राप्त करने के बाद डा. सिंह को भारत सरकार के 'टास्क फोर्स ऑफ नेशनल रिन्डरपेस्ट इरैडीकेशन प्रोग्राम' का अध्यक्ष नियुक्त किया गया। साथ ही दक्षिण पूर्व एशिया में रिन्डरपेस्ट रोग के उन्मूलन हेतु आप खाद्य एवं कृषि संगठन के सलाहकार रहे। थाईलैंड में कैप्राइन आर्थराइटिस एन्सीफेलाइटिस रोग के अन्वेषण हेतु विश्व स्वास्थ्य संगठन के सलाहकार के रुप में भी आपने योगदान दिया। आपको जूनोसिस रोगों पर विश्व स्वास्थ्य संगठन के सलाहकार मंडल का सदस्य होने का भी विशिष्ट गौरव प्राप्त है।

मथुरा में अपने कार्यकाल के दौरान डा. सिंह ने भारत में पशुधन और कुक्कुट के अनेक विषाणु, जीवाणु और अन्य रोगजनकों की पहचान की और उसका वर्णन किया। आपने भारत में पहली बार संक्रामक ब्रोंकाइटिस, संक्रामक लैरिंजोट्रेकाइटिस, पक्षी एनसेफेलोमाइलिटिस, भेड़ों तथा बकरियों में पल्मोनरी एडीनोमेटोसिस और मेडी रोगों की सूचना दी। साल्मोनेला के अनेक नये सीरोटाइप यथा ***एस. मथुरा, एस. वृन्दावन, एस. गोकुल, एस. गोवर्धन*** और ***एस. ब्रजभूमि*** की पहली बार पहचान की गई, जिसे आपका उत्कृष्ट योगदान माना जाता है।

आपको राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर की प्रतिष्ठित शोध पत्रिकाओं में 100 से अधिक प्रकाशनों से जुड़े होने का गौरव प्राप्त है। आपने 40 से अधिक ऐसी महत्वपूर्ण खोजें की, जिसकी सूचना भारतीय या विश्व साहित्य में पहली बार आपके द्वारा ही दी गई। भैंसों के एक महत्वपूर्ण नियोप्लास्टिक रोग लिम्फोसारकोमा का सर्वेक्षण किया गया और इसके रोगकारक की पहचान की। माइकोप्लाज्मा, जो कि वर्तमान में अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर मनुष्यों, पशुओं और पौधों के संभावी रोगजनकों के रुप में महत्वपूर्ण माना जा रहा है, उसकी खोज उन्होंने कुक्कुटों में भारत में पहली बार 1959 में की थी। अपने 25 वर्षो से अधिक के शिक्षण अनुभव के दौरान, आपने विकृतिविज्ञान, विषाणुविज्ञान और जीवाणुविज्ञान के क्षेत्र में मास्टर और पी-एच.डी. स्तर के अनेक छात्रों के अनुसंधान कार्य का मार्गदर्शन किया।

डा. सिंह को अनेक भारतीय वैज्ञानिक समितियों का अध्यक्ष और 20 से अधिक अन्तर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय वैज्ञानिक समितियों/मंडलों का सदस्य होने का गौरव प्राप्त है। आप अनेक राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय वैज्ञानिक समितियों के फेलो हैं। खाद्य एवं कृषि संगठन, विश्व स्वास्थ्य संगठन, यू एन डी पी, आइ ए इ ए और भारत सरकार द्वारा संचालित अनेक कार्यशालाओं/सेमिनारों के आप सलाहकार रहे हैं। डा. सिंह ने अनेक अन्तर्राष्ट्रीय/राष्ट्रीय सेमिनारों, सम्मेलनों आदि में हिस्सा लिया है और अनेक अन्तर्राष्ट्रीय/राष्ट्रीय सेमिनारों, परियोजनाओं का पर्यवेक्षण किया है। प्रतिनियुक्ति पर आप आई टी ई सी. कार्यक्रम के अन्तर्गत जंजीबार, तंजानिया भी गये थे। आपने फ्रान्स, युनाइटेड किंगडम, संयुक्त राज्य अमेरिका, रुस, आस्ट्रेलिया सहित एक दर्जन से अधिक देशों में विभिन्न पदों पर कार्य किया।

राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर पशुओं के स्वास्थ्य, उत्पादन और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में उन्नयन के लिए डा. सिंह को चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर तथा भारतीय पशु-चिकित्सा अनुसंधान संस्थान, इज्जतनगर ने डी. एस-सी. की मानद उपाधि से सम्मानित किया है। वर्तमान में डा. सिंह राष्ट्रीय पशु-चिकित्सा विज्ञान अकादमी और भारतीय पशु-चिकित्सा परिषद के अध्यक्ष हैं। वे पेरिस स्थित साइन्टिफिक एण्ड टैक्निकल रिव्यू संस्था के वैज्ञानिक परामर्श मंडल के सदस्य भी हैं। यह कहना अतिशयोक्तिपूर्ण नहीं होगा कि डा. सिंह के नेतृत्व में इस देश में पशु-चिकित्सा विज्ञान की शिक्षा के क्षेत्र में क्रान्तिकारी परिवर्तन हुये हैं। आपको सम्मानित करते हुए यह विश्वविद्यालय भी गौरव का अनुभव कर रहा है।

अतः मेरी प्रार्थना है कि आप डा. चिंतामणि सिंह को इस विश्वविद्यालय की 'विज्ञान वारिधि' की मानद उपाधि प्रदान करके सम्मानित करें।

राष्ट्रीय संगोष्ठी एवं प्रथम भारतीय पशु जैवरसायन एवं जैव प्रौद्योगिकी समिति सभा की संयोजन समिति द्वारा जीव रसायन विभाग, भा.प.चि.अ. संस्थान, इज्जतनगर की रजत जयन्ती पर महान वैज्ञानिक, उद्भट विद्वान एवं पथ प्रदर्शक डा. चिंता मणि सिंह का उनकी हीरक जयन्ती के अवसर पर -

सारस्वत-अभिनन्दन

उत्तर प्रदेश के पूर्वांचल में जौनपुर जनपद स्थित बेलांव ग्राम में 30 नवम्बर 1922 को जन्मे, जीवन के पल्लवित 75 मगरे वसन्त दृष्टा, सुसंस्कारों पोषित मेधावी छात्र, पशु-चिकित्सा महाविद्यालय, पटना से जी. बी. वी.सी. की उपाधि स्वर्ण पदक सहित प्राप्त, मिशीगन विश्वविद्यालय, अमेरिका से एम.एस. तथा पी-एच. डी. की उपाधियों से विभूषित, विकृतिविज्ञान व जीवाणुविज्ञान में विशेषज्ञ पशु-चिकित्सा विषाणु अनुसंधान संस्थान, कार्नल विश्वविद्यालय में पोस्ट डाक्टरेट फ़ेलो, 1947 में उत्तर प्रदेश पशु पालन विभाग में पशु-चिकित्सक के पद से निरंतर प्रगति पथ पर अग्रसर, 1952 में उत्तर प्रदेशीय पशु-चिकित्सा एवं पशुपालन महाविद्यालय में शरीर क्रिया विज्ञान व जीव रसायन विभाग में शोध सहायक तथा वहीं 1957-64 तक विकृतिविज्ञान व जीवाणुविज्ञान के आचार्य एवं अध्यक्ष/ 1958-61 तक आगरा विश्वविद्यालय में अधिष्ठाता पशु-चिकित्सा संकाय/1964 -1966 अधिष्ठाता पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, हिसार, सन् 1966-1982 तक भारतीय पशु-चिकित्सा अनुसंधान संस्थान, इज्जतनगर के निदेशक पद पर प्रतिष्ठित, 16 वर्ष से अधिक की अद्वितीय एवं उत्कृष्ट सेवा करते हुए 30 नवम्बर 1982 को सेवानिवृत्त, अपनी समर्पित लगन, निष्ठा व क्षमता से संस्थान की सर्वतोमुखी उन्नति का प्रतीक/विकृतिविज्ञान व जीवाणुविज्ञान में 34 एम.वी. एस-सी. तथा 8 पी-एच.डी. शोध प्रबंधों के कुशल निर्देशक, राष्ट्रीय अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिकाओं में अनेक शोधपत्र प्रकाशित/अपनी दूरदृष्टि व गतिशील नेतृत्व से संस्थान में 6 से 26 विभागों के निर्माता तथा बैंगलोर, श्रीनगर, मकदूम, भोपाल, अंडमान-निकोबार, पालमपुर, मुक्तेश्वर आदि नये परिसर और क्षेत्रीय केन्द्रों के विस्तार के जनक; 1972 में जीव रसायन विभाग के संस्थापक, पशु स्वास्थ्य, उत्पादन प्रौद्योगिकी और पशु-चिकित्सा जन स्वास्थ्य विषयों की प्रगति हेतु समर्पित।

गो पशु, भैंस, शूकर, बकरी, भेड़, कुक्कुटों के श्वसन सम्बंधी रोगों, बछड़ों की मृत्यु तथा खुरपका और मुहंपका विषाणु पर अखिल भारतीय समन्वित शोध परियोजनाओं द्वारा राष्ट्रीय स्तर पर सह–विषयक शोध पर विशेष ध्यान देने हेतु प्रेरणा स्रोत/ खाद्य एवं कृषि संगठन तथा विश्व स्वास्थ्य संगठन के अंतर्राष्ट्रीय कार्यक्रमों से निरन्तर सम्पर्करत, योग्यतम् पशु–चिकित्सा एवं पशु उत्पादन वैज्ञानिकों को समर्पण की भावना से कार्य करने हेतु प्रेरित करने वाले/ सेवानिवृत्ति के बाद भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद,कृषि मंत्रालय, भारत सरकार, विश्वविद्यालय संगठन, खाद्य एवं कृषि संगठन, संघ लोक सेवा आयोग तथा विभिन्न कृषि विश्वविद्यालयों की उच्च शक्ति प्राप्त समितियों, पैनल एवं चयन दलों के सक्रिय सदस्य, जैव प्रौद्योगिकी विभाग, भारत सरकार से सम्बंधित, इसके उपयोग से पशु–चिकित्सा और पशु उत्पादन विकास में प्रगति के स्पष्ट दृष्टा/ वन जन्तुओं के रोगों तथा संरक्षण में विशेष रुचि, भारतीय पशु–चिकित्सा परिषद के संस्थापक अध्यक्ष, राष्ट्रीय रिन्डरपेस्ट उन्मूलन कार्यक्रम की टास्कफोर्स के अध्यक्ष तथा विश्व खाद्य एवं कृषि संगठन के सलाहकार के रुप में दक्षिण–पूर्व एशिया तथा प्रशान्त महासागर क्षेत्र, बैंकाक, भूटान आदि देशों में उल्लेखनीय कार्य, पेरिस स्थित वैज्ञानिक तथा तकनीकी रिव्यू संस्था के वैज्ञानिक परामर्श मंडल के सदस्य।

भारत में पशु–चिकित्सा एवं पशुपालन को स्थापित कर उसके समग्र विकास के महान शिल्पी तथा शलाका पुरुष डा. चिंता मणि सिंह को स्वतंत्रता की स्वर्ण जयंती तथा जीव रसायन विभाग की रजत जयंती के अवसर पर सम्मानित व अभिनन्दित कर यह समिति अपने आपको गौरवान्वित अनुभव करती है।

डा. ओइम सिंह तोमर
संरक्षक

डा. लाल निशाकर सिंह
अध्यक्ष

डा. अशोक कुमार
आयोजन सचिव

डा. मुरारी लाल सारस्वत
आलेख एवं प्रस्तुति

अध्याय – ग्यारह

प्रकाशन

शोध-पत्र

जीवाणु विज्ञान

1. अदलखा, एस. सी. एंड सिंह, सी. एम. (1962) इंसीडेंस आफ प्लूरो–निमोनिया लाइक आर्गेनिजम्स इन पोल्ट्री। इंडियन ज. माइक्रोबायोल. 2: 165–168।

2. अदलखा, एस. सी. एंड सिंह, सी. एम.(1966) माइक्रोफ्लोरा आफ द रेस्पिरेटरी ट्रेक्ट आफ पोल्ट्री एशोसियेटेड विद प्लूरो–निमोनिया लाइक आर्गेनिज्म्स। इंडियन वेट्. ज. 43: 480–483।

3. बक्सी, एस. एन. एंड सिंह, सी. एम. (1964) सीरोटाइप्स आफ स्ट्रे. एगलेक्सी आइसोलेटेड फ्राम बोवाइन मिल्क। इंडियन ज. कम्परेटिव पैथ. एंड थेरा. 4: 141–143।

4. बक्सी, एस. एन. एंड सिंह, सी. एम. (1964) एंटीजेनिक रिलेशनशिप बिटवीन मैस्टाइटिस स्ट्रेप्टोकोकाई बिलांगिंग टू ग्रुप सी–I स्टडीज बाई एग्लुटिनेशन, प्रेसीपिटेशन, प्रेसीपिटेशन एब्सार्बशन एंड प्रेसीपिटेशन इन एगार जेल। ज. कम्परेटिव पैथ. एंड थेरा. 74: 398–408।

5. बक्सी, एस. एन. एंड सिंह, सी. एम. (1964) एंटीजेनिक रिलेशनशिप बिटवीन मैस्टाइटिस स्ट्रेप्टोकोकाई बिलांगिंग टू ग्रुप सी–II पैथोजेनिसिटी एंड रेसीप्रोकल माउस प्रोटेक्शन पावर। ज. कम्परेटिव पैथ. एंड थेरा. 74: 409–414।

6. दत्ता, एस. के. एंड सिंह, सी. एम. (1964) साल्मोनेला गोकुल ए न्यू सीरोटाइप फ्राम पिग्स। इन्टर. बुल. बैक्ट. नोमेन. एंड टैक्सान. 14: 161–163।

7. दत्ता एस. के., शर्मा, वी. के. एंड सिंह सी. एम. (1964) फरदर स्टडीज आन साल्मोनेला फ्राम ह्यूमन कैरियर्स। इंडियन ज. मेड. रिस. 52: 549–552।

8. दत्ता, एस. के., शर्मा, वी. के. एंड सिंह, सी. एम. (1964) पब्लिक हेल्थ सिग्नीफिकेंस आफ साल्मोनेला इन सीवेज। इंडियन ज. पब्. हेल्थ 8: 147–150।

9. दत्ता, एस. के. एंड सिंह, सी. एम. (1965) साल्मोनेला सीरोटाइप्स फ्राम डोमेस्टिक एनीमल्स, बर्ड्स एंड बोन मील। इंडियन ज. वेट्. साइंस एंड एनीमल हस. 35: 121–125।

10. गुप्ता, आर. एन. एंड सिंह, सी. एम. (1969अ) स्टडीज आन *इस्चीरिचिया कोलाई* फ्रांम केसेश ऑफ कोलीसेप्टीसीमिया ऑफ पोल्ट्री इन इंडिया। इंडियन ज. एनीमल साइंसेस. 39: 231–241।

11. गुप्ता, आर. एन. एंड सिंह, सी. एम. (1969ब) स्टडीज आन इ. कोलाई फ्राम एग पेरीटोनाइटिस इन पोल्ट्री इन इंडिया। इंडियन ज. एनीमल हेल्थ 8: 1.10।

12. गुप्ता, आर. एन. एंड सिंह, सी. एम. (1972) इ. कोलाई इन पिग्स फ्राम सम पार्टस आफ इंडिया। इंडियन ज. एनीमल साइंसेस 42: 115।

13. अय्यर, पी. के. आर., पाठक, आर. सी. एंड सिंह, सी. एम. (1959) आबसर्वेसंस आन राउंड हार्ट डिसीज इन फाउल। इंडियन वेट् ज. 36: 2–5।

14. कुलकर्णी, एम. एन., गुप्ता, आर. एन., एंड सिंह सी. एम. (1970अ) इ. कोलाई टाईप्स आइसोलेटेड फ्राम एग पेरीटोनाइटिस एंड सैलपिंजाइटिस इन पोल्ट्री एंड एक्सपेरीमेंटल स्टडीज आन देम। इंडियन ज. पोल्ट्री साइंस 5: 1–11।

15. कुलकर्णी, एम. एन., गुप्ता, आर. एन. एंड सिंह, सी. एम. (1970ब) स्टडीज आन इ. कोलाई स्ट्रेंस आईसोलेटेड फ्राम क्रनाकि

रेस्पिरेटरी डिसीस आफ पोल्ट्री इन इंडिया। इंडियन वेट् ज. 47: 95–105।

16. कासटिया, एस. एस. एंड सिंह, सी. एम. (1961) टाइपिंग आफ इ. कोलाई स्ट्रेंस आफ ह्यूमन ओरिजन बाई बैक्ट्रीरियोफाज। इंडियन ज. माइक्रोबायल। 1: 105–108।

17. मखेलिया, बी. डी. एंड सिंह सी. एम. (1963) साल्मोनेला वृन्दावन ए न्यू एंड एटिपीकल सीरोटाइप फ्राम पिग। इंटर. बुल. बैक्ट. नोमेन. एंड टैक्सान। 13: 177–178।

18. मखेलिया, बी. डी. एंड सिंह, सी. एम. (1964) पब्लिक हेल्थ इंपार्टेंस आफ साल्मोनेला इनफेंक्संस इन पिग्स। इंडियन ज. पब्. हेल्थ 8: 7–10।

19. मलिक, बी. एस. एंड सिंह, सी. एम. (1959) ए प्रिलीमिनरी नोट आन फाज टाइपिंग आफ बोवाइन अडर स्टैफाइलोकोकाई। करंट साइंस 28 : 453।

20. मलिक, बी. एस. एंड सिंह, सी. एम. (1960) स्टडीज आन स्टैफाइलोकोकाई विद पर्टीकुलर रेफरेंस टू स्ट्रेंस फ्राम बोवाइन अडर। बायोकेमीकल एक्टीविटीस। प्रोस. नेश. एके. साइंस इंडिया। 30: 101–108।

21 मलिक, बी. एस. एंड सिंह, सी. एम. (1961) स्टीडज आन स्टैफाइलोकोकाई IV पेनिसिलिन सेंसीटिविटी। इंडियन ज. वेट. साइंस 30: 81।

22. मलिक, बी. एस. एंड सिंह, सी. एम. (1960) स्टडीज आन स्टैफाइलोकोकाई– VII फाज टाइपिंग। इंडियन ज. वेट. साइंस 30: 265।

23. मलिक, बी. एस. एंड सिंह, सी. एम. (1960) स्टडीज आन स्टैफाइलोकोकाई–VII सीरोलोजिकल टाइपिंग एंड इट्स कम्पैरीजन विद फाज टाइपिंग। ज. इंफेक्संस. (यू. एस. ए.) 166: 256।

24. मलिक, बी. एस. एंड सिंह, सी. एम. (1961) स्टीडज आन स्टैफाइलोकोकाई– II कोगुलेस एक्टिविटी। आगरा यूनी. ज. रिस. 10: 47।

25. मलिक, बी. एस., सिंह, सी. एम. एंड अदलखा, एस. सी. (1961) स्टडीज आन स्टैफाइलोकोकाई–V पैथोजेनिसिटी। आगरा यूनी. ज. रिस. 10: 171।

26. पाठक, आर. सी. एंड सिंह, सी. एम. (1969) ए प्रिलीमिनरी रिपोर्ट आन द आइसोलेसंस एंड आइडेंटीफिकेशन आफ प्लूरो–निमोनिया लाइक आर्गेनिजम्स फ्राम पोल्ट्री। पोल्ट्री साइंस 38: 926–929।

27. पाठक, आर. सी. एंड सिंह, सी. एम. (1959) प्लूरो–निमोनिया लाइक आर्गेनिज्म्स फ्राम पोल्ट्री इन इंडिया। करंट साइंस 22: 338–339।

28. पाठक, आर. सी. एंड सिंह, सी. एम. (1959) आइसोलेशन आफ साल्मोनेला स्पेशीज फ्राम फाउल्स। इंडियन ज. पब्. हेल्थ 3: 117।

29. पाठक, आर. सी., सिंह, सी. एम. एंड टागंडी, आर. पी. (1960) चिक मारटेलिटी एंड द कंटामिनेशन आफ योक्स बाई मीन्स आफ द इंटरोबैक्टीरेसी। ब्रिटिश वेट्. ज. 116: 81–84।

30. पाठक, आर. सी. एंड सिंह,सी. एम. (1961) अकरेंस आफ प्लूरोनिमोनिया लाइक आर्गेनिज्म्स इन पोल्ट्री इन इंडिया। आगरा यूनी. ज. रिस. (साइंस) 10: 155–170।

31. पाठक, आर. सी. एंड सिंह, सी. एम. (1962) अकरेंस आफ कैंडिडा स्पीशीज इन क्राप्स आफ फाउल्स। इंडियन ज. माइक्रोबायल. 2: 89–90।

32. पाठक, आर. सी. एंड सिंह, सी. एम. (1967) ए डिफयूसेबल वाटर सालूबल एंटीजेनिक फ्रैक्शन इक्सट्रेक्टेड फ्राम ब्रु. एबार्टस सेल्स। करंट साइंस 36: 208–209।

33. पाठक, आर. सी. एंड सिंह, सी. एम. (1969) कम्परेटिव स्टडी आफ स्टैंडर्ड एंड सप्लसीमेंटल सीरोलोजिकल टेस्ट्स फार द डायग्नोसिस आफ ब्रूसेल्लोसिस इन हर्डस कैरिंग इंफेक्शन स्टेटस। द वेटरनेरियन 6: 35–43।

34. पाठक, आर. सी. एंड सिंह, सी. एम. (1969) हीट स्टेबिलिटी एंड काइनेटिक्स आफ हीट इनएक्टीवेशन आफ स्फेसीफिक एंड ब्रुसेल्ला एग्लूटिनिंनस इन कैटल एंड बफेलो सीरम। इंडियन ज. एक्स. बायल. 7: 111–114।

35. पाठक, आर. सी. एंड सिंह, सी. एम. (1970) सीरोकेमिकल करेक्टराइजेशन आफ ए सालुबल इक्सट्रेक्टेड फ्राम ब्रुसेल्ला एर्बाटस। इंडियन ज. एक्स. बायल. 8: 925–929।

36. पाठक, आर. सी. एंड सिंह, सी. एम. (1970) नेचर आफ पोस्ट वैक्सीनल ब्रूसेल्ला एग्लुटिनिंस। इंडियन ज. एक्स. बायल. 8: 31–33।

37. पंडा, पी. सी. एंड सिंह, सी. एम. (1967 अ) करेक्टराइजेशन आफ आई एल टी वाइरस आफ पोल्ट्री I कल्टीवेशन, प्रोपागेशन एंड सीरम न्यूट्रालाइजेशन टेस्ट इन डेवलपिंग चिक इम्ब्रीयोस। इंडियन वेट्. ज. 44: 365–374।

38. पंडा, पी. सी. एंड सिंह, सी. एम. (1967ब) करेक्टराइजेशन आफ आई एल टी वाइरस आफ पोल्ट्री II साइटोपैथोजेनिक इफेक्ट एंड सीरम न्यूट्रालाइजेशन टेस्ट इन होल चिक इम्ब्रीयो सेल कल्चर सिस्टम। इंडियन ज. पोल्ट्री साइंस 2: 1–5।

39. शर्मा, एस. पी. एंड सिंह, सी. एम. (1963) साल्मोनेला सीरोटाइप्स इन एनीमल्स। इंडियन ज. माइक्रोबायल. 3: 13–16।

40. शर्मा, एस. पी., शर्मा, वी. के. एंड सिंह, सी. एम. (1963) साल्मोनेला सीरोटाइप्स फ्राम ह्यूमन कैरियर्स इन मथुरा सिटी। इंडियन ज. मेडिकल रिस. 51: 404–405।

41 शर्मा, वी. के. एड सिह, सी. एम. (1961) अकरंस आफ साल्मोनेला इन डोमेस्टिक एनीमल्स एंड पोल्ट्री इन इंडिया। नेचर (लंदन) 191: 622–623।

42. शर्मा, वी. के. एंड सिंह, सी. एम. (1962) फाज टाइपिंग आफ एस. टाइफीम्यूरियम आइसोलेटेड फ्राम मैन एंड एनीमल्स। इंडियन ज. माइक्रोबायल. 2: 157–160।

43. शर्मा, वी. के. एंड सिंह, सी. एम. (1963) साल्मोनेला सीरोटाइप्स फ्राम सीवेज इन उत्तर प्रदेश। इंडियन ज. मेड. रिस. 51: 339–403।

44. शर्मा, वी. के. एंड सिंह, सी. एम. (1963 बी) साल्मानेला बरेली एंड साल्मोनेला चेस्टर फ्राम एन आउट ब्रेक इन चिकेंस। इंडियन ज. माइक्रोबायल. 3: 85–86।

45. शर्मा, वी. के. एंड सिंह सी. एम. (1963) साल्मोनेल्ला ब्रजभूमि ए न्यू सीरोटाइप्स फ्राम इंटरनेशनल बुल बैक्ट. नामेन. एंड टैक्सोना. (आइओवा) 13: 179–180।

46. शर्मा, वी. के., दत्ता, एस. के. एंड सिंह, सी. एम. (1964) साल्मोनेला इनफेक्संस इन रैबिट्स। इंडियन ज. मेड. माइक्रोबायल. 4: 138–140।

47. शर्मा, वी. के. एंड सिंह, सी. एम.(1967) साल्मोनेला सीरोटाइप्स फ्राम सीवेज इन मथुरा सिटी। इंडियन ज. मेड. रिस. 55: 289–290।

48. शर्मा, वी. के. एंड सिंह, सी. एम.(1967) साल्मोनेला गोवर्धन ए न्यू सीरोटाइप्स फ्राम सीवेज। इंटरनेशनल ज. सिस्टम. बैक्टीरियो. (आइओवा) 17: 41–42।

49. शर्मा, वी. के. एंड सिंह, सी. एम.(1967) इफेक्ट आफ एल्टरिंग कल्चरल कंडीसंस इन इंडयूसिंग सीरोलोजिकल चेंजेस इन साल्मोनेला। इंडियन ज. माइक्रोबायल. 7: 153–154।

50. शर्मा, वी. के. एंड सिंह, सी. एम.(1970) पैथोजेनीसिटी आफ सम न्यू साल्मोनेला सीरोटाइप्स। इंडियन ज. एनीमल साइंस 40: 437–440।

51. शर्मा, वी. के. एंड सिंह ,सी. एम. (1970) लैबोरेटरी वैरियेंस आफ सम न्यू साल्मोनेला सीरोटाइप्स। इंडियन ज. एनीमल साइंस 40: 309–311।

52. शर्मा, वी. के. एंड सिंह, सी. एम. (1970) लाइसोजेनिक कनवर्सन एंड ट्रांसडक्शन स्टडीज इन साल्मोनेला गोवर्धन। इंडियन ज. मेड रिस. 58: 16–19।

53. शर्मा, वी. के. एंड सिंह, सी. एम. (1970) कीमोथेराप्यूटिक्स सेंसीटिविटी आफ सम न्यू साल्मोनेला सीरोटाइप्स। इंडियन ज. एनीमल साइंस 40: 142–145।

54. सिंह, एम. पी. एंड सिंह, सी. एम. (1968) फंगाई आइसोलेटेड फ्राम क्लीनिकल केसेस आफ बोवाइन मैस्टाइटिस इन इंडिया। इंडियन ज. एनीमल हैल्थ 7: 259–263।

55. सिंह, एम. पी. एंड सिंह, सी. एम. (1969) माइकोटिक डर्मेटाइटिस इन कैमल्स। इंडियन वेट्. ज. 46: 854।

56. सिंह, एम. पी. एंड सिंह, सी. एम. (1970) फंगाई एसोसियेटेड विद सुपरफीसियेल मायकोसिस आफ कैटल एंड शीप इन इंडिया। इंडियन ज. एनीमल हैल्थ 9:75।

57. सिंह, एम. पी. एंड सिंह, सी. एम. (1970) एस्पर्जिलाई एसोसियेटेड विद रेस्पिरेटरी ट्रेक्ट आफ बफैलोस, शीप, गोटस एंड पोल्ट्री। इंडियन वेट्. ज. 624।

58. सिंह, एम. पी. एंड सिंह, सी. एम. (1970) फंगाई एशोसियेटेड विद रिंगवर्म इन डाग्स। इंडियन ज. एनीमल हैल्थ 9: 109।

59. सिंह, एम. पी. एंड सिंह, सी. एम. (1971) कैंडीडियेसिस इन पोल्ट्री। इंडियन ज. एनीमल साइंस 41: 294।

60. सिंह, एम. पी. एंड सिंह, सी. एम. (1972) *कैंडिडा पैराक्रुसाई* इंफेक्शन इन गोट्स। इंडियन ज. एनीमल हैल्थ 11: 111।

61. सिंह, एम. पी. एंड सिंह, सी. एम. (1972) *ट्राइकोफायटान सिमाई* इनफेक्शन इन पोल्ट्री। वेट. रिक. 90: 218।

62. सिंह, एस. बी., सिंह, जी. आर. एंड सिंह, सी. एम. (1964) ए प्रिलीमनरी रिपोर्ट आन द अकरेंस आफ इनफेक्सियस लैरिंजो–ट्रेकियाईटिस आफ पोल्ट्री इन इंडिया। पोल्ट्री साइंस 43: 492–494।

63. सिंह, एस. बी. एंड सिंह, सी. एम. (1967 अ) स्टडीज आन एवियन प्लूरो–निमोनिया लाईक आर्गेनिज्मस। । इंसीडेंस आफ क्रानिक रेस्पिरेटरी डिसीज आफ पोल्ट्री इन इंडिया। इंडियन वेट. ज. 44: 7–16।

64. सिंह, एस. बी. एंड सिंह, सी. एम. (1967 ब) स्टडीज आन एवियन प्लूरो–निमोनिया लाईक आर्गेनिज्म्स ।। ट्रांस ओवेरियन ट्रांसमिशन। इंडियन वेट. ज. 44: 17– 24।

65. सिंह, एस. बी. एंड सिंह, सी. एम. (1967 स) स्टडीज आन एवियन प्लूरो–निमोनिया लाईक आर्गेनिज्म्स। ।।। इन विट्रो एंटीबायोटिक सेंसीटिविटी। इंडियन वेट. ज. 44: 187–192।

66. सिंह, एस. बी. एंड सिंह, सी. एम. (1967 डी) स्टडीज आन एवियन प्लूरो–निमोनिया लाईक आर्गेनिज्म्स। रेजिंग पी पी एल ओ फ्री फ्लाक बाई एंटीबायोटिक ट्रीटमेंट। इंडियन वेट. ज. 44: 192–198।

67. वर्मा, के. सी., सिंह जी. आर. एंड सिंह, सी. एम. (1968) अकरेंस आफ इनफेक्सियस ब्रांकाइटिस आफ पोल्ट्री इन इंडिया। इंडियन ज. वेट. साइंस 38: 418–423।

विकृति विज्ञान

1. राज्या, बी. एस. एंड सिंह, सी. एम. (1959) पैथोलोजी आफ जोहनीस डिसीस इन शीप–। हिमेटोलोजिकल आब्जर्वेशंस। इंडियन वेट. ज. 36: 551–554।

2. राज्या, बी. एस. एंड सिंह, सी. एम. (1959) पैथोलोजी आफ जोहनीस डिसीस इन शीप–।। हिस्टोपैथोलोजिकल आब्जर्वेशन आन प्रेसंश

आफ *मायकोबैक्टीरियम पैराट्यूबरकुलोसिस* इन द हार्ट आफ शीप। इंडियन वेट. ज. 36: 554–556।

3. राज्या, बी. एस. एंड सिंह, सी. एम. (1961) पैथोलोजी आफ जोहनीस डिसीस इन शीप–।।। पैथोलोजिक चेंजेस इन शीप विथ नेचुरली अकरिंग इनफेक्शन। अमेरिकन ज. वेट. रिस. 22: 189–203।

4. सिंह, बी., एंड सिंह, सी. एम. (1963) स्टडीज आन द पैथोलोजी आफ क्रानिक रेस्पिरेटरी डिसीस आफ पोल्ट्री इन इंडिया । पैथोलोजिकल चेंजेज इन फील्ड केशेस। आगरा यूनी. ज. रिस. (साइंस) 12: 69–78।

5. सिंह, बी., एंड सिंह, सी. एम. (1963) स्टडीज आन द पैथोलोजी आफ क्रानिक रेस्पिरेटरी डिसीस आफ पोल्ट्री इन इंडिया ।। पैथोलोजिक चेंजेज इन कम्पलीकेटेड केशेस एंड देयर कोरिलेशन विद कल्चरल एंड सीरोलोजिकल रिसल्टस इन रिलेशन टू पी पी एल ओ। पोल्ट्री साइंस 42: 944–949।

6. द्विवेदी, जे. एन. एंड सिंह, सी. एम. (1963) पल्मोनरी आसीफिकेशन इन ए बफैलो। इंडियन वेट. ज. 40: 691–693।

7. राज्या, बी. एस. एंड सिंह, सी. एम. (1964) पैथोलोजी आफ निमोनिया एंड एशोसियेटेड रेस्पिरेटरी डिसीसेस इन शीप एंड गोट्स । अकरेंस आफ जागजियेक्टी एंड मेडी इन शीप एंड गोट इन इंडिया। अमेरिकन ज. वेट. रिस. 25: 61–67।

8. द्विवेदी, जे. एन. एंड सिंह, सी. एम. (1964) पल्मोनरी लीसंश इन एन इंडियन बफैलो एशोसियेट विद एकैंथामी–बी स्पीशीज। इंडियन ज. माइक्रोबायल. 5: 31–34।

9. द्विवेदी, जे. एन. एंड सिंह, सी. एम. (1965) द अकरेंस आफ फैसियोला जाइजेंटिका इन द लंगस आफ इंडियन बफैलोस (बास बुबेलिस)। इंडियन वेट. ज. 42: 662–663।

10. द्विवेदी, जे. एन. एंड सिंह, सी. एम. (1966) पल्मोनरी ट्यूबरकुलोसिस इन बफैलोस। इंडियन वेट. ज. 43: 582–585।

11. शर्मा, डी. एन. एंड सिंह, सी. एम. (1968) स्टडीज आन पैथोलोजी आफ फीमेल जेनाइटल ट्रेक्ट आफ पोल्ट्री विथ स्पेशल रेफरेंस टू एग पेरीटोनाइटिस–नियोप्लाज्म आफ ओवरी एंड ओवीडक्ट। इंडियन वेट्. ज. 45: 388–391।

12. शर्मा, डी. एन. एंड सिंह, सी. एम. (1968) स्टडीज आन पैथोलोजी आफ फीमेल जेनाइटल ट्रेक्ट आफ पोल्ट्री विद स्पेशल रेफरेंस टू एग पेरीटोनाइटिस–इंसीडेंस, पैथोएनाटामी एंड एक्सपेरीमेंटल स्टडी। इंडियन ज. वेट्. साइंसेस 38: 737–746।

13. शर्मा, डी. एन. एंड सिंह, सी. एम. (1968) स्टडीज आन पैथोलोजी आफ फीमेल जेनाइटल ट्रेक्ट आफ पोल्ट्री विद स्पेशल रेफरेंस टू एग पेरीटोनाइटिस II अंडरडेवलप्ड एंड एट्राफीड ओवरीस एंड ओवीडक्टस। पोल्ट्री साइंस 47: 1379–1381।

14. सिंह, के. पी. एंड सिंह, सी. एम. (1969) सब–एक्यूट वाल्वुलर इंडोकार्डाइटिस इन बफैलोस इन यू.पी.। इंडियन वेट्. ज. 46: 541–542।

15. द्विवेदी, जे. एन. एंड सिंह, सी. एम. (1969) स्टडीज आन द पैथोलोजी आफ फीमेल रिप्रोडक्टिव आर्गेन्स आफ द इंडियन बफैलो II द ओवरीस। सीलोन वेट्. ज. 17: 70–72।

16. द्विवेदी, जे. एन. एंड सिंह, सी. एम. (1970) स्टडीज आन द पैथोलोजी आफ फीमेल रिप्रोडक्टिव आर्गेन्स आफ द इंडियन बफैलो–अकरेंस आफ रेटी ओवरी एंड सिस्ट एडीनोमा। इंडियन वेट्. ज. 47: 115–118।

17. मोहंती, जी. सी. एंड सिंह, सी. एम. (1970) पैथोलोजिक फीचर्स आफ फोकल नान–सपुरेटिव नेफ्राइटिस इन बफैलोस। इंडियन वेट्. ज. 47: 391–396।

18. मोहंती, जी. सी. एंड सिंह, सी. एम. (1970) पैथोलोजिक फीचर्स आफ सपुरेटिव नेफ्राइटिस इन कैटल एंड बफैलोस। इंडियन वेट्. ज. 47: 821–826।

19. मोहंती, जी. सी. एंड सिंह, सी. एम. (1970) एक्टीनोबेसीलोटिक नेफ्राइटिस इन मेल बफैलो–ए केस रिपोर्ट। इंडियन वेट्. ज. 47: 938–941।

20. सिंह, के. पी. एंड सिंह, सी. एम. (1970) पैरासिटिक इनफेरोटेशन आफ बोवाइन हार्ट इन यू. पी.। इंडियन वेट्. ज. 47: 1023।

21. सिंह, के. पी. एंड सिंह, सी. एम. (1970) एओर्टिक आंकोसर्कोसिस इन बफैलोस इन यू. पी.। इंडियन वेट्. ज. 47: 1135–1137।

22. द्विवेदी, जे. एन. एंड सिंह, सी. एम. (1971) स्टडीज आन द पैथोलोजी आफ फीमेल रिपरोडक्टिव आर्गेन्स आफ इंडियन बफैला–IV आब्जर्वेसंश ऑन बरसाइटिस एंड हाइड्रोसैल्पिक्स केसेश। इंडियन ज. एनीमल साइंसेस 41: 27–32।

23. द्विवेदी, जे. एन. एंड सिंह, सी. एम. (1971) स्टडीज आन द पैथोलोजी आफ फीमेल रिपरोडक्टिव आर्गेन्स आफ इंडियन बफैलो–V हाइड्रोटयूबो इन्फलेशन टेस्ट एंड म्यूकोसल सिस्टस इन ओवीडक्टस। इंडियन ज. एनीमल साइंसेस 41: 155–160।

24. द्विवेदी, जे. एन. एंड सिंह, सी. एम. (1971) स्टडीज आन द पैथोलोजी आफ फीमेल रिपरोडक्टिव आर्गेन्स आफ इंडियन बफैला– I ओवेरियन एबनार्मेलीटीस। इंडियन ज. एनीमल हेल्थ 10: 27–36।

25. द्विवेदी, जे. एन. एंड सिंह, सी. एम. (1971) हिस्टोकेमीकल आब्जर्वेसंश आन द ओवरी आफ इंडियन बफैलो। इंडियन ज. एनी. हेल्थ 10: 205–211।

26. द्विवेदी, जे. एन. एंड सिंह, सी. एम. (1971) हिस्टोकेमीकल आब्जर्वेसंश आन द इंडोमेट्रियम आफ इंडियन बफैलो। इंडियन ज. एनीमल हेल्थ 11: 31–34।

27. परिहार, एन. एस. एंड सिंह, सी. एम. (1971) सम एवियन रेस्पिरेटरी एफेक्संश। इंडियन ज. एनीमल साइंसेस 41: 603–609।

28. परिहार, एन. एस. एंड सिंह, सी. एम. (1971) सम एवियन रेस्पिरेटरी मायकोसिस। इंडियन ज. एनीमल साइंसेस 41: 712–720।

29. परिहार, एन. एस. एंड सिंह, सी. एम. (1971) पैथोलोजी ऑफ क्रानिक रेस्पिरेटरी डिसीस इन पोल्ट्री। इंडियन ज. एनीमल साइंसेस 41: 721–726।

30. परिहार, एन. एस. एंड सिंह, सी. एम. (1971) सम एवियन रेस्पिरेटरी ट्यूमर्स। इंडियन ज. एनीमल साइंसेस 41: 731–739।

31. सिंह, सी. एम., सिंह, बी. एंड परिहार, एन. एस. (1973) पल्मोनरी इनवाल्वमेंट इन लिम्फोसारकोमा आफ इंडियन बफैलोस। इन: 'यूनीफाइंग कानसेप्ट आफ ल्यूकीमिया' बिबलोथिका हिमेटोलोजिका 39: 220–227, डचर, आर. एम. एंड चिको बियानची (एडीटर्स) कारगर बासेल।

32. सिंह, बी., सिंह, के. पी., परिहार, एन. एस., बँसल, एम. पी. एंड सिंह, सी. एम. (1979) क्लीनिकोपैथोलोजिकल स्टडीज आन लिम्फोसारकोमा इन इंडियन बफैलोस (बुबालस बुबालिस)। वेट्. मेड. ए. 26: 468–481।

33. सिंह, सी. एम., सिंह, बी , परिहार, एन. एस., सिंह के. पी. एंड बंसल, एम. पी. (1979) स्टडीज आन बोवाइन लिम्फोसारकोमा/ ल्यूकीमिया इन इंडियन बफैलोस। इंडियन वेट्. मेड. ज. 3: 97–102।

34. द्विवेदी, जे. एन. एंड सिंह, सी. एम. (1975) स्टडीज आन द फालीकुलायडस इन ओवरीस आफ बफैलोस। इंडियन ज. एनीमल साइंसेस 45: 15–20।

35. द्विवेदी, जे. एन. एंड सिंह, सी. एम. (1975) स्टडीज आन द हिस्टोपैथोलोजी आफ यूटेरस आफ बफैलो। इंडियन ज. एनीमल साइंसेस 45: 20–24।

36. द्विवेदी, जे. एन. एंड सिंह, सी. एम. (1978) ए नोट आन द नियोप्लज्मस, आफ फीमेल रिप्रोडक्टीव आर्गेन्स आफ इंडियन बफैलो। इंडियन ज. एनीमल साइंसेस 48:61–64।

विविध

1. सिंह, सी. एम. (1972) पशुचिकित्सा : नयी चुनौतियां। खेती 24(12): 26–29।

2. सिंह, सी. एम. (1972) बोवाइन ट्यूबरकुलोसिस : इन द टैक्सट बुक आन ट्यूबरकुलोसिस, पेज 482–491। एडीटर के एन राव, पब्लिशर कोठारी बुक डिपो, बम्बई।

3. सिंह, सी. एम. (1994) वाइरसेस–सरटेन हाईलाइटस एडं लैंडमार्क इन वाइरोलोजी इन ट्रापिक्स, पेज 5–9, एडीटर्स नारायन ऋषि, के एल आहुजा एंड बी पी सिंह। पब्लिशर मल्होत्रा पब्लिकेशन हाऊस, नई दिल्ली।

4. परमेश्वर, आर., चौधरी, आर. एंड सिंह, सी. एम. (1992) रिर्पोट आफ द रिव्यू कमेटी एस एंड टी प्रोजेक्ट आन कैटिल हर्ड इम्प्रूवमेंट फार इनक्रीज्ड प्रोडक्टीविटी यूसिंग इम्ब्रियो ट्रांसफर टेक्नोलोजी पेज, 1–95, सबमिटेड टू डा. एस रामचन्द्रन सेकरेटरी, डिपार्टमेंट आफ बायोटेक्नोलोजी, मिनिस्टरी आफ साइंस एंड टेक्नोलोजी, गर्वनमेंट आफ इंडिया, नई दिल्ली।

5. सोमवंशी, आर. एंड सिंह सी. एम. (1992) सम डिसीजेस रिकार्डेड इन कैपटिव फीसेंटस इन इंडिया : फीसेंटस इन एशिया, एडीटर डी जेनकिंस पेज, 114–118, वर्ल्ड फीसेंटस एशोसियेशन, रीडिंग, यू. के.।

1922 – तीस नवम्बर 1922 को ग्राम बेलांव, मुफ्तीगंज, जिला जौनपुर, उ.प्र. में जन्म।

1941 – इंटर कालेज, जौनपुर में हाईस्कूल परीक्षा उत्तीर्ण किया।

1943 – उदय प्रताप कालेज, बनारस से इंटर जीवविज्ञान परीक्षा उत्तीर्ण किया।

1947 – बिहार पशु–चिकित्सा विज्ञान महाविद्यालय, पटना से जी.बी.वी.सी. की उपाधि प्रथम स्थान एवं स्वर्ण पदक सहित प्राप्त किया।

1947 –1949 – प्रभारी पशु–चिकित्सक नागरिक पशु चिकित्सालय, उ. प्र।

1949 –1950 – प्रभारी क्षेत्रीय प्रयोगशाला, उपनिदेशक पशुपालन कार्यालय इलाहाबाद।

1950 –1952 – पशु–चिकित्सा विज्ञान महाविद्यालय, मथुरा में डेमांस्ट्रेटर तथा पशुधन अनुसंधान केन्द्र, मथुरा में शोध सहायक रहे।

1952 – बड़ी पुत्री श्यामा सिंह का 1 अप्रैल 1952 को जन्म।

1953 –1956 – पशु विकृतिविज्ञान विभाग मिशीगन राज्य विश्वविद्यालय में ग्रेजुऐट सहायक रहे।

1954 – मिशीगन राज्य विश्वविद्यालय, अमेरिका से विकृति और जीवाणुविज्ञान में एम.एस. की स्नातकोत्तर उपाधि प्राप्त किया।

1956 – कार्नेल विश्वविद्यालय, इथाका, अमेरिका में विषाणुविज्ञान में पोस्ट डाक्टरल फेलो रहे।

1957 – उत्तर प्रदेशीय पशु पालन एवं पशु–चिकित्सा महाविद्यालय, मथुरा में जीवाणु एवं विकृतिविज्ञान विभाग में आचार्य एवं विभागाध्यक्ष पद पर योगदान दिया।

958 – 19 मई, 1958 को पुत्र कृष्ण कुमार सिंह का जन्म।

959 – 5 मई 1959 को पुत्री अनुराधा सिंह का जन्म।

1960 – 4 जून 1960 को पुत्री शशि सिंह का जन्म

1961 – 4 सितम्बर 1961 को पुत्र सत्येन्द्र सिंह का जन्म।

1964 – पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, हिसार में पशु–चिकित्सा विज्ञान महाविद्यालय के अधिष्ठाता का पदभार संभाला।

1966 – 18 जुलाई, 1966 को भारतीय पशु–चिकित्सा अनुसंधान संस्थान, इज्जतनगर के निदेशक पद पर योगदान दिया।

1982 – 2 मई, 1982 को चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर ने डी.एस–सी. की मानद उपाधि से सम्मानित किया।

1982 – 30 नवम्बर, 1982 को सोलह वर्ष की सेवा पश्चात् सेवा–निवृत्त।

1990 – 9, दिसम्बर, 1990 को भारतीय पशु–चिकित्सा अनुसंधान संस्थान, इज्जतनगर बरेली ने डी.एस–सी. की मानद उपाधि से सम्मानित किया।

1997 – 21 जून, 1997 को गो.ब. पंत कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय पन्तनगर ने विज्ञान वारिधि (डाक्टर ऑफ साइंस) की उपाधि से सम्मानित किया।

1998 – राष्ट्रीय संगोष्ठी एवं प्रथम भारतीय पशु जैव रसायन एवं जैव प्रौद्योगिकी समिति सभा द्वारा जीव रसायन विभाग, भा.प.चि.अ.सं., इज्जतनगर की रजत जयंती पर डा. सिंह की हीरक जयंती के सुवसर पर अभिनंदन एवं प्रशस्ति–पत्र प्रदान कर सम्मानित किया।

1998 – 3 नवम्बर, 1998 को सोसाइटी फार इम्यूनोलोजी एंड इम्यूनोपैथोलोजी ने आप को लाईफ टाइम एचीवमेंट एवार्ड से सम्मानित किया।

1999 – 25 फरवरी, 1999 को पश्चिमी बंगाल पशु एवं मतस्य विज्ञान विश्वविद्यालय कलकत्ता ने अपने प्रथम दीक्षांत समारोह में डी. एस–सी की मानद उपाधि से सम्मानित किया।

2000 – 28 जनवरी, 2000 को भारतीय पशु–चिकित्सा परिषद, नई दिल्ली के अध्यक्ष चुने गये।